आदर्श जीवन गीताञ्जली...धारा...38...

(गद्य-पद्य मय)

जीवन प्रबोधक आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव

पुण्य-स्मरण

ग्राम आसपुर में आयोजित भ. आदिनाथ पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव निर्विघ्न सानन्द सम्पन्न के उपलक्ष्य में

अर्थ सौजन्य

उपरोक्त महोत्सव निमित्त ''आचार्यश्री कनकनन्दी जी साहित्य कक्ष'' स्थापना के उपलक्ष्य में सकल दि. जैन समाज, आसपुर द्वारा प्रदत्त स्वैच्छिक ज्ञानदान से...

ग्रंथांक-242 प्रतियाँ-500
संस्करण-2015 मूल्य-51/-

सम्पर्क सूत्र व प्राप्ति स्थान

आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त

(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान

द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा

चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418

(2) डॉ. नारायणलाल कछारा

सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

प्रस्तुत गीताञ्जली का इतिहास

आदर्श जीवन गीताञ्जली की कविताएँ आचार्यश्री पद्मनन्दी जी के अनुरोध से बनी।

(आचार्य कनकनन्दी अर्थात् गीताञ्जलियों के रचयिता, आचार्य पद्मनन्दी जी के शिक्षा गुरु है।)

आचार्य पद्मनन्दी ने मुझे उदयपुर में अनुरोध किया कि हे! गुरुदेव आपकी भाषा व विषय अत्यन्त उच्च व कठिन है, अतः आप सामान्य जनों के लिए यह समझ में नहीं आता है, अतएव आप सरल भाषा में कविताओं की रचना करे एवं जो कठिन कविताएँ हैं उनकी सरल टीका आप करे जिससे हम सब व सामान्य जन लाभान्वित होंगे। उनकी भावना को सुनकर मैं उन्हें तथा उपस्थित साधु-साध्वी एवं गृहस्थों को अनेक प्रश्न करके इस संबंधी शोध-बोध करने के उपरान्त सरल भाषा एवं सरल राग से प्रस्तुत गीताञ्जली की कविताओं की रचना हुई। इन कविताओं से संबंधित मेरी पूर्व की दो पुस्तिकाओं को भी इस कृति में जोड़कर सामान्य जन के लिए प्रस्तुत है।

आचार्य पद्मनन्दी के समान ही मुझे अनेक वर्षों से अनेक साधु-साध्वी-वैज्ञानिक प्रोफेसर्स एवं सामान्य जन अनुरोध कर रहे हैं। उन सबकी भावनाओं का आदर करके प्रस्तुत गीताञ्जली की कविताएँ बनीं। अनुरोधकर्त्ताओं का भी मैं उपकृत हूँ। प्रस्तुत कृति से स्व-पर-विश्व कल्याण हो, ऐसी महती भावना से.....

आचार्य कनकनन्दी

आसपुर, दिनांक 27.06.2015

इस कृति-गीताञ्जली का इतिवृत्त

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : तुम दिल की धड़कन.....)

इस कृति का इतिहास मैं कर रहा हूँ यहाँ वर्णन।
इसके लिए कारण बने अनेक साधु-साध्वी व विज्ञानी जन।।धृ.।।

आचार्य पद्मनन्दी बोले मुझे सुनो! हे गुरुदेव! मेरी विनती।
आपकी कविता का विषय होता है सूक्ष्म गहन अति।।

सरल व सुबोध शैली में करो है कविताओं की रचना।

गहन कविताओं की भी करो है आप टीका की रचना।। (1)

साधारण लोगों को न समझ में आती शुद्ध व उच्च भाषा।
गहन व सूक्ष्म विषय भी, न समझ पाते है विशेष।।

ऐसा ही अनेक वर्षों से (1989) अनेक मेरे भक्त-शिष्य।
विद्यार्थी से लेकर प्रौढ़ जन व, वैज्ञानिक कुलपति शिष्य।। (2)

इनकी विनम्र प्रार्थना से, बनी यह ''आदर्श गीताञ्जली।''
सरल सुबोध भाषा शैली से, बनी है कविता पुष्पाञ्जली।।

इनमें सहयोगी विशेषतः, श्रमण सुविज्ञसागर जी शिष्यवर।
आध्यात्मनंदी, सुवत्सलमती, श्रमणी अनेक शिष्यवर।। (3)

सबके सहयोग व उत्साह से, बन रहे हैं विशेष ग्रंथ।
'सूरी कनकनन्दी' तो अकिंचित्कर, बहिरंग व अंतरंग निर्ग्रंथ।।

स्व-पर विश्वकल्याण हो, यह है शुभपयोग मेरा।
समता शांति व निस्पृहता से, आत्मानुभव हो मेरा।। (4)

आसपुर, दिनांक 28.06.2015, मध्याह्न 2.32

कनक गुरुकुल की शिक्षा पद्धति...

-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : मेरे देश की धरती.....)

श्रीसंघ कनक की शिक्षा पद्धति...बनाती ज्ञानी-गुणी...श्रीसंघ कनक की...(स्थायी)...

यहाँ नित स्वाध्याय चलता है...जिससे होता मौलिक ज्ञान...
संस्कार-संस्कृति-आध्यात्मिक...आगम-गणित-विज्ञान...

प्राचीन से लेकर आधुनिक...शोध-बोध-नवाचार ज्ञान...
तन-मन-आत्मा के स्वास्थ्य का...होता है निरन्तर लाभ...श्रीसंघ...(1)...

देश-विदेश के विज्ञानीजन...जिज्ञासा लेकर आते हैं...
जो प्रश्न कहीं पर सुलझे ना...यहाँ शीघ्र समाधान पाते हैं...

चर्चा-वार्ता-संगोष्ठी आदि से...ज्ञान/(बोध) विशिष्ट पाते हैं...
यहाँ से प्रस्थान करके...वैश्विक प्रभावना करते हैं...श्रीसंघ...(2)...

वैश्विक गुरु का चलता-फिरता...विश्व-विद्यालय-गुरुकुल है...
जिसके कुलाधिपति 'कनकनन्दी'...गुरु अभिप्रेरक अनुमोदक है...
अरबों के जन समूह में जो...आध्यात्मिक/(अद्वितीय) श्रुतज्ञानी है...
आनंददायी शिक्षा पद्धति से...'सुविज्ञ' जन-मन रञ्जित है...श्रीसंघ...(3)...

पाड़वा, दिनांक 14.07.2015, रात्रि 9.10

आद्य प्रवर्तक आदिनाथ स्तवन

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : शांतिनाथ स्तवन....., शिव ताण्डव स्तोत्रम्)

अनादि कर्म नाशकः...अनंत गुणधारकम्...
आदि तीर्थ प्रवर्तकः...नमामि आदि तीर्थेशम्...(1)

आदि शिक्षा दायकः...आदि न्याय दायकः...
आदि प्रजा पालकः...लोक-नीति दायकः...(2)

आदि दीक्षा धारकः...ऋद्धि सम्पन्न साधकः...
घाति कर्म नाशकः...आदि धर्म प्रवर्तकः...(3)

अनंत ज्ञान धारकः...विश्व गुरु तीर्थेशः...
सर्व तत्त्व प्रकाशकः...मोक्षमार्ग प्रदर्शकः...(4)

परम सत्य बोधकः...पर तत्त्व द्योतकः...
आत्म तत्त्व ज्ञायकः...भेद-ज्ञान दायकः...(5)

अघाति कर्म नाशकः...सिद्ध-बुद्ध ज्ञायकः...
चिदानन्द धारकः...प्रभुः विभुः लोकेशः...(6)

अनंत गुण धारकः...ज्ञायकः आत्मस्थः...
लोकालोक ज्ञायकः...निलिप्तः निरञ्जनः...(7)

भव्य जीव सेवितम्...श्रमण वृन्द पूजितम्...
आदर्श गुण मण्डितम्...'कनक' तव पूजकः...(8)

पाड़वा, दिनांक 12.07.2015, मध्याह्न 3.05

(यह कविता श्रमण मुनि सुविज्ञसागर जी की भावना से बनी।)

आदर्श स्वस्थ सुखमय जीवन

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : तुम दिल की धड़कन....., चन्दा मामा दूर के.....)

कितना प्यारा है सादा जीवन...हँसी-खुशी का स्वस्थ जीवन...
सरल-सहज व शांत जीवन...महान् लक्ष्य से युक्त जीवन...(स्थायी)...

शरीर-इन्द्रिय-मन व आत्मा...जब ये सबल व होते साता...
तब ही जीवन होता है प्यारा...अन्यथा जीवन होता दुश्वारा...

शरीर से इन्द्रियाँ श्रेष्ठ होती...इन्द्रियों से मन की अधिक शक्ति...
मन से अधिक है आत्मशक्ति...परस्पर सहयोगी होती ये शक्ति...(1)

आत्मा अस्वस्थ तो मन अस्वस्थ...जिससे इन्द्रियाँ होती अस्वस्थ...
इन सबसे होता तन अस्वस्थ...जीवन होता अस्वस्थ-त्रस्त...

आत्मा स्वस्थ होता सत्य समता से...महान् लक्ष्य सह उदारता से...
क्षमा सहिष्णुता व शुचि दया से...दान सेवा सहयोग त्याग से...(2)...

इसी से मन भी होता शांत...संकल्प-विकल्प-संक्लेश अंत...
मन की एकाग्रता-क्षमता बढ़ती...जिससे इन्द्रियाँ भी शांत होती...

फैशन-व्यसनों से भी हो दूर...सादा जीवन होता उच्च विचार...
स्वास्थ्यकर शुद्ध शाकाहार होवे...प्राकृतिक शांत निवास होवे...(3)...

स्वावलंबन व श्रमशील जीवन...आडम्बर रहित सरल जीवन...
भ्रमण-प्राणायाम व योगासन...यम-नियम व ध्यान-अध्ययन...

प्राकृतिक जीवन आहार निवास...स्वावलंबनशील सक्रिय जीवन...
सादा जीवन सह उच्च विचार...सुखमय जीवन के होते आधार...(4)...

इनसे शरीर स्वस्थ सबल होता...महान् कार्य हेतु सहयोगी बनता...
जीवन सुखमय आदर्श होता...'कनक' आत्मिक सुख चाहता...(5)...

पाड़वा, दिनांक 13.07.2015, मध्याह्न 1.27 व 3.20

भारतीय ग्रंथों से आध्यात्मिकता व पाश्चात्य से प्रायोगिकता सीखता हूँ!

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

आध्यात्मिक सीखूँ मैं भारतीय ग्रंथों से...प्रायोगिकता सीखता हूँ मैं पश्चात्य से...
दोनों से ही लाभान्वित मैं हो रहा हूँ...सर्वांगीण विकास मैं कर रहा हूँ...(1)...
भारतीय ग्रंथों में है परम ज्ञान-विज्ञान...गणित-आयुर्वेद व नीति-नियम...
स्व-पर-विश्व कल्याण के समस्त सूत्र...मनोविज्ञान से लेकर आध्यात्म सूत्र...
अनेक शताब्दी तक भारत की परतंत्रता से...आलस्य प्रमाद व अकर्मण्यता से...
भ्रष्टाचार नकलची व फैशन मद से...भारतीय ज्ञान सुप्त है ग्रंथ मध्य में...(2)...
पाश्चात्य जगत् स्वतंत्र रहा पूर्व से...अन्य देशों को शासित किया बल से...
पाश्चात्य में विभिन्न क्रांतियाँ हुईं...राजनैतिक से लेकर विज्ञान की हुई...
स्वाभिमान स्वतंत्रता से वे जी रहे हैं...नये-नये शोध-बोध भी कर रहे है...
सहयोग समन्वय से वे जी रहे हैं...हर क्षेत्र में भी प्रयोग कर रहे है...(3)...
गुडमैनर-गुडबिहेवियर वे कर रहे हैं...प्रतिभा का सम्मान वे कर रहे है...
गुणग्रहण भी सभी से कर रहे हैं...नैतिक पूर्ण जीवन भी वे जी रहे है...
धन्यवाद व क्षमायाचना वे सदा करते...नियम-कानून को वे सभी पालते...
गंदगी व मिलावट वे नहीं करते...वातावरण परिसर की स्वच्छता रखते...(4)...
आत्म विश्लेषण-आत्म सम्बोधन करते...मनोविज्ञान को वे महत्व देते...
गलती से शिक्षा ले वे आगे बढ़ते...गुणग्राही स्वावलंबी वे बनते...
उपरोक्त गुण भारत में कम मिलते...ग्रंथों में भले वर्णन बहुत मिलते...
उक्त प्रायोगिक गुण मुझे अच्छे मिलते...आध्यात्मिक संस्कृति 'कनक' को अच्छे लगते...(5)...

आसपुर, दिनांक 10.06.2015, मध्याह्न 3.05

अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस दिनांक 21.06.2015 के उपलक्ष्य में

तन-मन-आत्मा के स्वास्थ्य हेतु योग/(ध्यान)

(चाल : सायोनारा....., क्या मिलिये....., सुनो-सुनो.....)

सुनो! सुनो! हे! दुनिया वालों...योग-ध्यान की सही पद्धति...
जिससे दुःखों से होगी निवृत्ति...अंत में होगी मुक्ति की सिद्धि...(ध्रुव)...

योग के होते है अष्ट अंग...यम[1] नियम[2] आसन[3] प्राणायाम[4]...
प्रत्याहार[5] व धारणा[6] समाधि[7]...अंतिम अंग होता है ध्यान[8]...

सत्य[1] अहिंसा[2] अचौर्य[3] ब्रह्मचर्य[4]...अपरिग्रह[5] रूपी होते पाँच यम I...
प्रभु उपासना[1] स्वाध्याय[2] तप[3]...संतोष[4] शौर्य[5] ये पाँच नियम II...(1)...

स्थिर आसन में हो शरीर की स्थिति...जिससे ध्यान हेतु बने परिस्थिति...
अनेक विध भी होते हैं आसन...चौरासी प्रकार भी होते हैं आसन III...

IV प्राणायाम है श्वास नियंत्रण...जिससे प्राणवायु का होता नियोजन...
V प्रत्याहार है इन्द्रिय संयमन...बाह्य प्रवृत्ति से होता नियंत्रण...(2)...

VI धारणा होती है समता भाव...राग-द्वेष-मोह से रहित भाव...
VII समाधि होती आत्म-प्रवृत्ति...VIII ध्यान होता है एकाग्र वृत्ति...

इससे तन-मन होते है स्वस्थ...आध्यात्मिक शक्ति भी जागृत...
पाप कर्मों का होता संवरण...पुण्य कर्मों का होता संचयन...(3)...

संकल्प-विकल्प-संक्लेश नशते...तन-मन-आत्मा भी सबल होते...
श्रद्धा-प्रज्ञा भी प्रखर होती...समता-शांति-संतुष्टि होती...

केवल आसन नहीं है ध्यान/(योग)...आसन से ही न मिले समस्त लाभ...
ध्यान तो आध्यात्मिक प्रक्रिया...ध्यान नहीं केवल तन की क्रिया...(4)...

पंथ-मत-जाति परे है ध्यान...भाषा-राष्ट्र सीमा परे है ध्यान...
तन-मन-आत्मा हेतु है ध्यान...क्षमता संवर्द्धन हेतु है ध्यान...

यह परम आध्यात्मिक प्रक्रिया...सुरक्षा संवर्द्धन हेतु प्रक्रिया...
नीति-नियम-सदाचार-कानून...ध्यान में गर्भित स्वास्थ्य विज्ञान...(5)...

पशु-पक्षी भी करते हैं योगासन...हर कार्य में समाहित योग (व) ध्यान...
हर मानव हेतु उपयोगी ध्यान...'कनक' करे सतत योग-ध्यान...(6)...

आसपुर, दिनांक 21.06.2015, प्रातः 8.50

(यह कविता श्रमण मुनि सुविज्ञसागर जी की भावना से बनी।)

मुझे अनुभव में आ रहा है ज्ञान ज्ञेय अनंत

(मेरे विद्यार्थी भाव के कारण व परिणाम)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., शत-शत वन्दन.....)

अनंत है ज्ञेय तो अनंत है ज्ञान, सर्वज्ञदेव ने ऐसा किया है कथन।
विज्ञान में ऐसा ही हो रहा शोध, मेरे अनुभव में ऐसा हो रहा बोध।। (1)

अनेक ग्रंथ पढ़ रहा (मैं) देश-विदेश के, धर्म-दर्शन-विज्ञान व कला क्षेत्र के।
वैज्ञानिक चैनलों से पढ़ रहा हूँ, हर जीव, घटनाओं से सीख रहा हूँ।। (2)

गद्य-पद्य में भी लिख रहा हूँ, विद्यार्थी जीवन से भी पढ़ा रहा हूँ।
तो भी हर विषय का (मुझे) न पूर्ण ज्ञान, न ही लिखा न पढ़ाया संपूर्ण ज्ञान।। (3)

विशिष्ट विषयों का ज्ञान (तो) हुआ न पूर्ण, सामान्य विषयों का (भी) ज्ञान हुआ न पूर्ण।
भाषा से लेकर खान-पान-न आरोग्य, पूर्णतः न हो पाया कीट-पतंग ज्ञान।। (4)

जितना जानता हूँ उतना (मैं) न लिख पाया, जितना लिखा (भी) उतना पढ़ा न पाया।
जितना-जितना जानता व लिखता जाता, उतना ही नवीन ज्ञान होता जाता।। (5)

जितना-जितना ज्ञान बढ़ता जाता, अपनी अज्ञानता का भान बढ़ता जाता।
जिससे विद्यार्थी भाव (भी) बढ़ रहा है, ज्ञानानंद का रसपान (भी) बढ़ रहा है।। (6)

इसी से (मेरा) अनुभव भी बढ़ रहा है, शोध-बोध-प्रयोग भी बढ़ रहा है।
लंद-फंद-द्वंदादि न भा रहे है, सच्चिदानंद रूप ('कनक' को) भा रहा है।। (7)

आसपुर, दिनांक 19.06.2015, प्रातः 8.52

वैज्ञानिक से भी मुझे बनना आध्यात्मिकता में श्रेष्ठ

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., मोक्ष पद मिलता धीरे-धीरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! उदार-सहिष्णु बनऽऽऽ
उदार वैज्ञानिक जन सेऽऽऽ अधिक उदार तू बनऽऽऽ...(ध्रुव)...

वे तो भौतिक वैज्ञानिक हैऽऽऽ तू तो आध्यात्मिक संतऽऽऽ
उनसे तुमको अनंत गुणितऽऽऽ होना है उदार संतऽऽऽ
आध्यात्मिक होता अनंतऽऽऽ/(अनंत गुण युक्त बनऽऽऽ) जिया रे...(1)

संकीर्ण पंथ-मत परे वेऽऽऽ करते है सत्य का शोधऽऽऽ
उनसे अधिक रूप से तुझेऽऽऽ करना (है) परम सत्य-शोधऽऽऽ
तुम तो सर्वज्ञ उपासकऽऽऽ जिया रे...(2)...

हर जीवों की रक्षा हेतु वेऽऽऽ कर रहे सतत प्रयासऽऽऽ
उनसे अधिक तुमको भाना हैऽऽऽ व्यापक अहिंसा रूपऽऽऽ
तू तो समता उपासकऽऽऽ जिया रे...(3)...

पृथ्वी की रक्षा हेतु वे तोऽऽऽ पर्यावरण सुरक्षा हेतुऽऽऽ
कर रहे प्रयास तो तुम कोऽऽऽ भाना है (भावना) विश्व कल्याण हेतुऽऽऽ
विश्व मंगल कामनाऽऽऽ जिया रे...(4)...

सत्य/(भौतिक) शोध-बोध-प्रयोग हेतुऽऽऽ वे करते बहु यत्नऽऽऽ
परम सत्य/(आत्मा) के शोध/(बोध) हेतुऽऽऽ तू कर पूर्ण प्रयत्नऽऽऽ
आत्म शोधक बन रेऽऽऽ जिया रे...(5)...

वे तो इन्द्रिय-यंत्र-बुद्धि सेऽऽऽ करते उपरोक्त सभी कामऽऽऽ
आत्म-शक्ति के द्वारा तुमकोऽऽऽ करना है उक्त सभी कार्यऽऽऽ
अन्तः प्रज्ञा से कार्य करऽऽऽ जिया रे...(6)...

इहलोक हित हेतु करते वे कार्यऽऽऽ तुम तो सर्वलोक हेतुऽऽऽ
अतएव तुमको अनंत गुणितऽऽऽ करना है मोक्ष के हेतुऽऽऽ
'कनक' अनंत गुणी बनऽऽऽ जिया रे...(7)...

आसपुर, दिनांक 24.06.2015, मध्याह्न 12.25

(महान् उदार सत्यग्राही वैज्ञानिक फ्रित्जॉफ काप्रा की शोधपूर्ण कृति "The Tao of Physics-भौतिकी का सतपथ" पुस्तक से भी प्रेरित व प्रभावित यह कविता...)

हमारे ससंघ की दैनंदिनी

(हमारे ससंघ के व्यस्त-मस्त सृजनात्मक कार्य)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : जय हनुमान....., शत-शत वंदन.....)

मेरी ही दैनंदिनी का, मैं कर रहा हूँ वर्णन।
जिससे मैं सतर्कता से, करूँ स्व-कर्त्तव्य पालन।। (स्थायी)

मेरा परम ध्येय है, स्वात्मा की ही उपलब्धि।
मेरा लक्ष्य नहीं है, सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि।।

सत्य-समता-शांति से ही, होती आत्म उपलब्धि।
इसी हेतु मुझे चाहिए, ध्यान-अध्ययन व विशुद्धि।। (1)

इसी हेतु मैं द्वंद्व-संक्लेश का, कर रहा हूँ विसर्जन।
उदार-सहिष्णु-निस्पृहता का, कर रहा हूँ मैं सर्जन।।

इसी हेतु मैं रहता हूँ मौन, प्रायः दिन में बीस (20) घंटे।
एकांत में रहता हूँ प्रायः, दिन में अठारह (18) घंटे।। (2)

अध्ययन अध्यापन लेखन में/(प्रश्नोत्तर में), व्यतीत होते सोलह (16) घंटे।
शोध-बोध वैज्ञानिक ज्ञान में, उपयोग होते यह घंटे।।

प्राणायाम-योगासन-व्यायाम, भ्रमण में लग जाते दो (2) घंटे।
आहार-निहार-शुद्धि हेतु, लग जाते है तीन (3) घंटे।। (3)

प्रतिक्रमण-भक्ति-वंदना में, व्यतीत होते दो (2) तीन (3) घंटे।
अध्यापन आदि कार्य के बाद, मौन एकांतवास/(विश्राम) कुछ घंटे।।

देश-विदेशों में धर्म प्रचार हेतु, होते विभिन्न भी कार्यक्रम।
शिविर-संगोष्ठी-प्रवचन-कक्षादि में, देता हूँ शिक्षा व मार्गदर्शन।। (4)

समय-शक्ति व उपलब्धियों का, होता सदुपयोग व संवर्द्धन।
इसी में ससंघ-भक्त-शिष्य सह, व्यस्त-मस्त रहते हैं रात-दिन।।

अतएव हमारे पास न रहता, व्यर्थ कार्य हेतु कुछ भी क्षण।
लंद-फंद व निन्दा गप्प हेतु, न होता भाव न होता कुछ क्षण।। (5)

संथ गति से शांत भाव से, स्व-पर-विश्व हेतु (हम) करते काम।
पाप-ताप-संताप त्याग कर, 'कनक' करे स्व-आत्म शोधन।। (6)

''मेरी कुछ समस्याएँ एवं सावधानियाँ''

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : तुम दिल की धड़कन.....)
मेरी कुछ समस्याओं का, मैं कर रहा हूँ वर्णन।
जिससे मैं सतर्क रहूँ, करूँ आत्मकल्याण।।1।।

मेरी शरीर की प्रकृति है, अत्यंत पित्त व उष्ण।
अत्यंत संवेदनशील भी, शरीर-इन्द्रियाँ व मन।।2।।

विद्यार्थी-अवस्था से ही कर रहा, हूँ अध्ययन व अध्यापन।
अधिक-जागना व कम सोना, करता हूँ प्रायः प्रतिदिन।।3।।

अधिक पसीना भी आता है, मेरे शरीर से नौ मास।
गरमी गंदगी (दुर्गंधी) से, होती है समस्याएँ विशेष।।4।।

क्षुल्लक बनने से लेकर प्रायः, होंगे पन्द्रह वर्ष तक।
अधिक अन्तराय भी हुए, आचार्य की पदवी तक।।5।।

समुचित व योग्य आहार भी, नहीं मिलता है हर-दिन।
अधजला-अधपका, अधिक नमक खट्टा भोजन।।6।।

जिससे और भी अधिक पित्त, बढ़ गया तथाहि उष्ण।
जिससे वमन व चक्कर (बेहोशी/दंतक्षय) आना, पसीना सहित होता है तन।।7।।

हैजा व पीलिया रोग भी, हो गया है एक-एक बार।
दीर्घकाल तक उसका प्रभाव, रहा है शरीर पर।।8।।

अन्य के लिए जो योग्य हो, भोजन-पानी-औषध।
मेरे लिए (वे) अयोग्य भी होते, गैस-वातावरण व गंध।।9।।

कलह विसंवाद पक्षपात, अनुशासनहीन निन्दा व अपमान।
संकीर्णता रूढ़ी व अनुदारता, अयोग्य है शब्द प्रदूषण।।10।।

इस सब कारणों से मेरा भाव-व्यवहार, होता है अन्य से भिन्न।
अतएव मुझे अन्य न समझ पाते, गलत मानते है कोई जन।।11।।

आहार के समय मुझे अधिक, रहना होता है सतर्क/(सजग)।
गरमी गंदगी बदबू कलह, आदि से अधिक होता कष्ट।।12।।

इन सब कारणों से मुझे, रहना पड़ता है सजग।
ज्ञान-वैराग्य व भावनानुसार (मैं), नहीं कर पाता हूँ त्याग।।13।।

उत्सर्ग व अपवादानुसार, करता हूँ आहार व विहार।
जिससे न बढ़े समस्या मेरी, साधना बढ़े निरंतर।।14।।

ध्यान-अध्ययन के लिए, चाहिए स्वस्थ तन व मन।

इसी हेतु मैं सेवन करता हूँ, औषधि व शीतल/(स्वच्छ) स्थान।।15।।

द्रव्य क्षेत्र काल भावानुसार, करता बाह्य तप-त्याग।
ध्यान-अध्ययन व शांति-समता, सेवता हूँ वैराग्य।।16।।

आगम में मैंने पढ़ा, तथाहि किया मैं अनुभव।
ध्यान अध्ययन आदि से, अधिक होता पावन भाव।।17।।

पावन भाव से ही अधिक, होती है कर्म-निर्जरा।
शांति-समता की भी वृद्धि होती, जिससे कर्म की निर्जरा।।18।।

ख्याति पूजा व लाभ हेतु, नहीं करता हूँ कुछ काम।
भीड़ जोड़ना व धन कमाना, नहीं है मेरा प्रयोजन।।19।।

आत्मकल्याण सहित जो, होता है विश्व कल्याण।
वैसा ही 'कनक' आचरण करे, नहीं अन्य प्रयोजन।।20।।

जो अभिमानी और भेददर्शी (छिद्रान्वेषी) है, जिसने सबसे वैर बाँध रखा है, उसके मन को कभी शांति नहीं मिलती है।

-श्रीमद् भागवत

अनुभव का एक काँटा, चेतावनी के पूरे जंगल के बराबर है।

-जेम्स रसेल लोवेल

बाजार ऐसा एक सुनिश्चित स्थल है जहाँ एक व्यक्ति दूसरों को धोखा देता है।

-अनाकासिस

अच्छा स्वभाव सदा सौंदर्य के अभाव को पूरा कर देगा किन्तु अच्छा सौंदर्य अच्छे स्वभाव के अभाव की कभी पूर्ति नहीं कर सकता।

-एडीसन

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र	विषय	पृ.क्र.
1.	प्रस्तुत गीताञ्जली का इतिहास	2
2.	इस कृति गीताञ्जली का इतिवृत्त	2
3.	कनक गुरुकुल की शिक्षा पद्धति	3
4.	आदिनाथ स्तवन	4
5.	आदर्श स्वस्थ-सुखमय जीवन	5
6.	भारतीय ग्रंथों से आध्यात्मिकता व पाश्चात्य से प्रायोगिकता सीखता हूँ	6
7.	तन-मन-आत्मा के स्वास्थ्य हेतु योग/(ध्यान)	6
8.	मुझे अनुभव में आ रहा है ज्ञान-ज्ञेय अनंत	8
9.	वैज्ञानिकों से भी मुझे बनना आध्यात्मिकता में श्रेष्ठ	8
10.	हमारे ससंघ की दैनन्दिनी	9
11.	मेरी कुछ समस्याएँ एवं सावधानियाँ	10
	परिच्छेद-I (पद्य विभाग)	
	आदर्श जीवन	
1.	सार्वभौम-सामान्य-आदर्श	16
2.	आदर्श जीवन (बाल कविताएँ)	17
3.	सामाजिक ज्ञान	19
4.	स्वास्थ्यप्रद नैतिक-आध्यात्मिक शिक्षा	21
5.	स्वस्थ्य व दीर्घ जीवन के लिए	22
6.	शारीरिक श्रम न करना धूम्रपान से भी अधिक रोग व मृत्यु का कारण	24
7.	पैदल चलने से तन-मन भी होते स्वस्थ व सबल	25
8.	सप्त व्यसन त्याग के धार्मिक-वैज्ञानिक कारण	26
9.	नो बोल्ड-स्मार्ट व ब्युटीफूल!?	27
	परिच्छेद-II	
10.	जैन धर्म का सामान्य परिचय	28
11.	श्रावक के षट्कर्म	29

12. चार (4) प्रकार के दान (दयादत्ति भी) 30
13. सेवा-दान की महानता 30
14. उत्तम आहार पद्धति 31
15. पञ्च व्रत पालन 32
16. विश्व के मूल 6 द्रव्य 33
17. सप्त तत्त्व व नव पदार्थ 34
18. कर्म सिद्धांत (बंध के कारण) 35
19. चार (4) कषायों का त्याग 37
20. वैश्विक दश (10) धर्म 38

परिच्छेद-III (गद्य विभाग)

21. छोटी-सी कृति की विश्वमूर्ति 40
22. जीवनोपयोगी सामान्य ज्ञान (आदर्श दैनिक चर्या) 41
23. दोपहर (मध्याह्न) की क्रियाएँ 49
24. रात्रिकालीन चर्या 51

परिच्छेद-IV

25. आदर्श जीवन चर्या 53
26. शिशु जीवन चर्या 53
27. विद्यार्थी जीवन चर्या 56
28. गृहस्थ जीवन चर्या 56
29. सामाजिक जीवन चर्या 57
30. राष्ट्रीय जीवन चर्या 59
31. वैश्विक जीवन चर्या 59
32. आध्यात्मिक जीवन चर्या 60

परिच्छेद-V

33. प्राचीन भारतीय दैनिक-जीवन चर्या एवं सामान्य ज्ञान 63

पद्य विभाग

34. जीवन हो गुणग्राही 74

35. सदुपयोग से उपकार तो दुरुपयोग से अपकार 76
36. स्व-आत्मचिन्तन 77

परिच्छेद-VI

37. मानव धर्म : आवश्यकता : परिणाम 79
38. धर्म का स्वरूप 82
39. अधर्म का स्वरूप एवं उसका कुफल 83
40. आध्यात्मिक विहीनता से विविध रोग-दुःख 87
41. वैदिक धर्म एवं विश्व शांति 100
42. बौद्ध धर्म एवं विश्व शांति 100
43. यहूदी धर्म एवं विश्व शांति 101
44. पारसी धर्म एवं विश्व शांति 101
45. ईसाई धर्म एवं विश्व शांति 101
46. ताओ धर्म एवं विश्व शांति 102
47. कांगफ्यूश धर्म एवं विश्व शांति 102
48. इस्लाम धर्म एवं विश्व शांति 102
49. इस देश की धरती चोर उगले (कविता) 102
50. मिलावट की आत्मकथा (कविता) 105
51. श्रमण गुरुवर श्री कनकनंदी जी की सत्यवाणी 106
52. श्री कनकनंदी जी गुरुदेव द्वारा सृजित ''बगिया की फुलवारी'' 107
53. एक गृहिणी माँ पाँच नौकरानी से अधिक कामकाजी (करती है 5 प्रोफेशनल्स का काम फिर भी बेरोजगार) 108
54. आचार्य कनकनन्दी जी ससंघ के आदर्श 111
55. मैं आडम्बर क्यों नहीं करता!? 111
56. ॐकार स्वरूप सद्गुरु/(समर्थ) 112

परिच्छेद-I (पद्य विभाग)

आदर्श जीवन

सार्वभौम-सामान्य-आदर्श

1. स्वावलंबी हम बनेंगे

स्वावलंबी बनेंगे...स्वयं का काम (स्वयं) करेंगे।
इसी से अनुभव बढ़ता...समय पर काम होता।
गलती से (हमें) शिक्षा मिलती...सफलता से शिक्षा मिलती।।
ला...ला...ला...

2. अनुशासन से आगे बढ़ेंगे

अनुशासन हम पालेंगे...आत्म संयमी बनेंगे।
उद्दण्ड नहीं बनेंगे...धीर-वीर (शांत) बनेंगे।
दीन-हीन (दंभी) नहीं बनेंगे...आत्म गौरव से आगे बढ़ेंगे।।
ला...ला...ला...

3. समयानुबद्ध हम बनेंगे

समय पर काम करेंगे...समयानुबद्ध बनेंगे।
व्यर्थ समय न गवायेंगे...समय का सदुपयोग करेंगे।
समय अमूल्य मानेंगे...बीता/(गत) समय न पायेंगे।।
ला...ला...ला...

4. हर समय विद्यार्थी रहेंगे

विद्यार्थी सदा रहेंगे...हर समय शिक्षा (भी) लेंगे।
अच्छे-बुरे से सीखेंगे...सुख-दुःख में शिक्षा लेंगे।
पुस्तकों से भी सीखेंगे...महापुरुषों से सीखेंगे।।
ला...ला...ला...

5. व्यर्थ, अनर्थ से दूर

निन्दा-चुगली न करेंगे...वाद-विवाद से बचेंगे।
व्यर्थ चर्चा न करेंगे...व्यर्थ काम न करेंगे।
ढोंगी नकलची न बनेंगे...उच्च विचार (सादा) रखेंगे।।
ला...ला...ला...

6. प्रतिस्पर्द्धा व नकलची बिना विकास

प्रतिस्पर्द्धा नहीं करेंगे...ईर्ष्या-द्वेष/(घृणा) से बचेंगे।
नकलची भी नहीं बनेंगे...स्वतंत्र-सक्षम बनेंगे।
ढोंग व दंभ से बचेंगे...आत्म गौरवशाली (श्रेष्ठ) बनेंगे।।
ला...ला...ला...

7. आत्मचिन्तन व आत्मसुधार

आत्मचिन्तन करेंगे...स्व-गुण-दोष जानेंगे।
आत्मसुधार करेंगे...आदर्शमय (श्रेष्ठ) बनेंगे।
स्वयं का निर्माण करेंगे...श्रेष्ठ-ज्येष्ठ (सच्चा) बनेंगे।।
ला...ला...ला...
आसपुर, दिनांक 27.06.2015, मध्याह्न 2.04

आदर्श-जीवन

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. हमारा लक्ष्य...

हम सब बच्चे हैं...बनना हमें सच्चे हैं...
स्वस्थ-सबल बनेंगे...आदर्श जीवन जीयेंगे...
विश्व में शांति लायेंगे...अंत में मोक्ष जायेंगे...ला...ला...ला...(1)...

2. दैनिक चर्या...

(1) प्रातःकालीन दैनिक क्रियाएँ...

प्रातः हम उठेंगे...प्रभु-स्मरण करेंगे...
हाथ-पैर-मुँह धोयेंगे...आँखों में छींटा मारेंगे...
शौच-शुद्धि करेंगे...प्रातः भ्रमण करेंगे...ला...ला...ला...(2)...
योग-प्राणायाम करेंगे...अनेक खेल खेलेंगे...
थोड़ा विश्राम करेंगे...तेल (मालिश) मर्दन करेंगे...
दंत धोवन करेंगे/(पानी छानकर नहायेंगे)... स्वच्छ वस्त्र पहनेंगे...
ला...ला...ला...(3)...

(2) प्रातःकालीन धार्मिक कर्त्तव्य...

प्रभु के दर्शन करेंगे...भजन-पूजन करेंगे...
शास्त्र स्वाध्याय करेंगे...गुरु के प्रवचन सुनेंगे...
बड़ों को प्रणाम करेंगे...छोटों को प्यार करेंगे...ला...ला...ला...(4)...

(3) साधु सेवा व आध्यात्म ज्ञान की शिक्षा...

शुद्ध वस्त्र पहनेंगे...साधुओं को आहार देंगे...
साधुओं की सेवा करेंगे...उनसे शिक्षा पायेंगे...
मोक्ष मार्ग जानेंगे...आत्मिक ज्ञान पायेंगे...ला...ला...ला...(5)...

(4) भोजन क्रिया...

हाथ-पैर-मुँह धोयेंगे...कुल्ला भी सही करेंगे...
शुद्ध शाकाहार करेंगे...बत्तीस बार चबायेंगे...
बाजारू भोजन न करेंगे...दूध-फल-सब्जी खायेंगे...ला...ला...ला...(6)...

3. लौकिक-शिक्षा...

स्कूल में पढ़ने जायेंगे...लौकिक शिक्षा पायेंगे...
ज्ञान-विज्ञान पढ़ेंगे...फैशन-व्यसन न करेंगे...
आदर्श नागरिक बनेंगे...राष्ट्र की सेवा करेंगे...ला...ला...ला...(7)...

4. अपराह्न की क्रियाएँ...

स्कूल से घर आयेंगे...शरीर शुद्धि करेंगे...
शुद्ध भोजन करेंगे...विश्राम-भ्रमण करेंगे...
खेल से मैत्री करेंगे...समाज सेवा करेंगे...ला...ला...ला...(8)...

5. संध्या की क्रियाएँ...

शाम को मंदिर जायेंगे...भजन-आरती करेंगे...
गुरु की सेवा करेंगे...घर में आकर पढ़ेंगे...
सिनेमा क्लब न जायेंगे...अयोग्य टी.वी. न देखेंगे...ला...ला...ला...(9)...

6. रात्रि में शयन व प्रातः जागरण...

स्वच्छ कक्ष में सोयेंगे...खिड़की खुली रखेंगे...
पर्याप्त निद्रा लेंगे...रात्रि जागरण न करेंगे...
ब्रह्म मुहूर्त में जगेंगे...पूर्वोक्त क्रिया करेंगे...ला...ला...ला...(10)...

7. नैतिक व आध्यात्मिक जीवन...

आदर्श जीवन जीयेंगे...भ्रष्टाचार न करेंगे...

मिलावट न करेंगे...दया-दान-सेवा करेंगे...
सत्य-अहिंसा पालेंगे...शांति-समता पायेंगे...ला...ला...ला...(11)...
ज्ञानी-महान् बनेंगे...श्रावक या साधु बनेंगे...
सार्थक जीवन जीयेंगे...साधना से सिद्धि पायेंगे...
मानव से भगवान् बनेंगे...'कनक' लक्ष्य को पायेंगे...ला...ला...ला...(12)...

आसपुर, दिनांक 15.06.2015, मध्याह्न 12.50

सामाजिक ज्ञान

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

परस्पर सहयोगात्मक सह-अस्तित्व ही समाज

व्यक्ति के समूह समाज है/(परिवार से समाज है), समाज में सब का स्थान/(मान) है।
समाज अभिन्न अंग है...सब का उचित भाग है।
परस्पर सहयोगी समाज है...सभी को देते सम्मान है।।...ला...ला...ला...

उपेक्षित अन्नदाता किसान

किसान अन्नदाता है...सबका उनसे नाता है।
भूमिपुत्र वे होते हैं...भरपूर श्रम वे करते है।
किसान से मानव जीते हैं...तो भी उपेक्षित होते है।।...ला...ला...ला...

महान् निर्माता कुंभार

कुंभार निर्माण कर्ता है, उनसे बर्तन/(पात्र) मिलते है।
भोजन पात्र में बनता है...घड़े में पानी रखते हैं।
दीया व खिलौने बनाता है...तो भी उपेक्षित होता है।।...ला...ला...ला...

दूधदाता ग्वाला

ग्वाला गाय पालता है...दूध हमको मिलता है।
स्वस्थ-सबल बनते है...दूध-घी-मट्ठा-खाते हैं।
पंचगव्य मिलते हैं...ग्वाला से लाभ लेते हैं।।...ला...ला...ला...

महान् वास्तुकार बढ़ई

बढ़ई घर बनाते हैं...घर में हम रहते हैं।
सुरक्षा हमारी होती है...सर्दी-गर्मी/(वर्षा) से बचते हैं।

घर से ग्रामादि बनते है...समाज रचना होती है।।...ला...ला...ला...

वस्त्रदाता बुनकर

बुनकर वस्त्र बनाते हैं...वस्त्र हम पहनते हैं।
लज्जा निवारण करते हैं...सर्दी-गर्मी से बचते हैं।
विभिन्न उपयोग करते हैं...(दि. जैन) साधु नग्न रहते हैं।।...ला...ला...ला...

फूल फलदाता माली

माली बगीचा बनाते हैं...फूल-फल हम पाते हैं।
नाना सब्जियाँ उगाते हैं...हम प्रयोग में लाते हैं।
स्वस्थ-सबल बनते हैं...सहयोग (की) शिक्षा पाते हैं।।...ला...ला...ला...

अनक्षरी लेखक-मूर्ति-चित्रकार

मूर्ति-चित्रकार होते हैं...मूर्ति व चित्र बनाते हैं।
महापुरुषों से प्रकृति तक...जीवन्त सम बनाते हैं।
प्रतीक रूप में होते हैं...मौन/(मूक) उपदेश देते हैं।।...ला...ला...ला...

मनोरंजक व मनोमंजक संगीतकार

संगीतकार होते हैं...संगीत हमें सुनाते हैं।
विभिन्न ज्ञान मिलते हैं...मनोरंजन भी करते हैं।
मनोमंजन भी होता हैं...शिक्षा स्वास्थ्य पाते हैं।।...ला...ला...ला...

मनोरंजक व मनोमंजक नाटककार (कलाकार)

नाटककार वे होते हैं...अभिनय से सीखाते हैं।
महापुरुषों की जीवनी द्वारा...जीवन्त शिक्षा देते हैं।
मनोरंजन भी होता हैं...मनोमंजन भी होता हैं।।...ला...ला...ला...

रोगहारी वैद्य-डॉक्टर

रोगी जब हम होते हैं...डॉक्टर वैद्य आते हैं।
हमें निरोग करते हैं...स्वास्थ्य उपाय बताते हैं।
स्वस्थ सबल होते हैं...उत्तम काम (हम) करते हैं।।...ला...ला...ला...

निर्माणकर्ता श्रमिक

श्रमिक श्रम करते हैं...निर्माण होता उत्तम हैं।
सड़क-तालाब-केनाल-घर...उसके श्रम के फल हैं।
उन्हें न मानो नीच हैं...उनके काम न तुच्छ हैं।।...ला...ला...ला...

राष्ट्र-निर्माता शिक्षक

शिक्षक हमें पढ़ाते हैं...उत्तम शिक्षा देते हैं।
चारित्र निर्माण करते हैं...ज्ञान-विज्ञान सीखाते हैं।
हमसे देश बनता है...शिक्षक राष्ट्र निर्माता है।।...ला...ला...ला...

आसपुर, दिनांक 15.06.2015, रात्रि 9.41

स्वास्थ्यप्रद नैतिक-आध्यात्मिक शिक्षा

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

रात्रि भोजन त्याग

रात्रि भोजन न करेंगे...अहिंसा धर्म पालेंगे...
रोग-पाप से बचेंगे...रात का बना (भोजन) न खायेंगे...
सूर्यास्त पूर्व भोजन लेंगे...स्वस्थ धार्मिक बनेंगे...ला...ला...ला...(1)

पानी छानकर पीना

छना हुआ पानी पीयेंगे...जीवों की रक्षा करेंगे...
रोग-पाप से बचेंगे...प्रासुक जल ही काम लेंगे...
पानी का अपव्यय न करेंगे...पानी को गंदा न करेंगे...ला...ला...ला...(2)

शाकाहारी बनेंगे

मांसाहार न करेंगे...शाकाहारी बनेंगे...
अहिंसा धर्म पालेंगे...जीवों की रक्षा करेंगे...
स्वस्थ-सबल बनेंगे...पर्यावरण रक्षा करेंगे...ला...ला...ला...(3)

मधु सेवन त्याग

मधु सेवन न करेंगे...(मधु) मक्खियों की रक्षा करेंगे...
हिंसा पाप से बचेंगे...(पर्यावरण)/प्रकृति रक्षा करेंगे...
मक्खी का भोजन न छीनेंगे...जूठन मांस न खायेंगे...ला...ला...ला...(4)

पञ्च उदम्बर फल त्याग

(पञ्च) उदम्बर फल न खायेंगे...जीवों की रक्षा करेंगे...
बड़-पीपल-पाकर-अञ्जीर...कठूम्बर न खायेंगे...
इनमें होते कीट प्रचुर...उनकी रक्षा करेंगे...ला...ला...ला...(5)

जमीकन्द त्याग

जमीकन्द न खायेंगे...(अनन्त) जीवों की रक्षा करेंगे...
निगोदिया जीव होते अनन्त...जन्म-मरण करते सतत...
सूक्ष्म होने से न दिखते...सर्वज्ञ ज्ञान गम्य ये...ला...ला...ला...(6)

नैतिक < धार्मिक < आध्यात्मिक

धार्मिक पूर्व नैतिक होंगे...अन्याय-शोषण न करेंगे...
पाप त्याग से धार्मिक होंगे...आध्यात्मिक भी बनेंगे...
राग-द्वेष-मोह (पूर्ण) त्यागेंगे...शुद्ध-बुद्ध हो मोक्ष जायेंगे...ला...ला...ला...(7)

विनम्र सत्यग्राही उदारभावी

(विनम्र) सत्यग्राही बनेंगे...(उदार) प्रगतिशील बनेंगे...
सत्य-तथ्य मानेंगे...तार्किक-वैज्ञानिक बनेंगे...
आत्मा का खोज करेंगे...समता-शांति को पायेंगे...ला...ला...ला...(8)

वात्सल्य-संगठन

वात्सल्य भाव रखेंगे...वैर-विरोध त्यागेंगे...
भेद-भाव-घृणा छोड़ेंगे...मायाचारी दम्भ त्यागेंगे...
संगठन से काम करेंगे...स्व-पर-विश्व हित करेंगे...ला...ला...ला...(9)

सद्गृहस्थ से साधु बनकर मोक्ष प्राप्ति

(सद्) गृहस्थ से साधु बनेंगे...आत्म-विशुद्धि करेंगे...
ध्यान-अध्ययन-तप करेंगे...निराडम्बर निस्पृह बनेंगे...
आत्मा को पवित्र करेंगे...कर्मनाश से मोक्ष जायेंगे.../
/(अनन्त सुखी हम बनेंगे)...ला...ला...ला...(1)

आसपुर, दिनांक 26.06.2015, रात्रि 1.22

स्वस्थ्य व दीर्घ जीवन के लिए

(चाल : तुम दिल की धड़कन.....)

स्वस्थ व दीर्घ आयु के लिए, सेवनीय कुछ विशेष गुण।
आयुकर्म के साथ-साथ ही, आवश्यक है निम्नोक्त गुण।।धृ.।।

पावन भाव व पावन काम, महान् लक्ष्य व सादा जीवन।
व्यसन व फैशन रहित जीवन, व्यस्त-मस्त-शान्त जीवन।।

शुद्ध सात्विक पौष्टिक भोजन, संयमित जीवन व नये-नये काम।
सकारात्मक विचार आशावादी स्वभाव, तथाहि अनुशसित जीवन।। (1)

समयानुबद्ध कर्त्तव्यनिष्टासह, सेवा सहयोग व परोपकार।
प्रेम सौहार्द्र संगठन सहित, महान् काम जो विश्व हितकर।।

प्रसन्नचित्त संतोष जीवन, निर्मल हँसी व प्राकृतिक जीवन।
स्वच्छ प्राकृतिक वातावरण में, निवास तथा प्रातः परिभ्रमण।। (2)

प्राणायाम योगासन-ध्यान-अध्ययन, निश्चिन्तता से गाढ शयन।
संक्लेश दुश्चिन्ता कलह द्वंद्व रहित, दान दया सहित जीवन।।

क्रूर कठोरता संकीर्णता रहित, सज्जन-साधु-ज्ञानी संगम।
इत्यादि स्वस्थ दीर्घ जीवन हेतु, 'कनक' को यह सभी मान्य।। (3)

पारडा ईटीवार, दिनांक 11.05.2015, अपराह्न

सीक्रेट फॉर लांग लाइफ

दुनिया में सबसे लंबी उम्र जीने वालों का संदेश

हाल ही में दुनिया के सबसे उम्रदराज पुरुष साकारी मोमोई 112 साल की उम्र में निधन हुआ। लंबी उम्र के लिए उनसे काफी कुछ सीखा जा सकता है। आइए जाने दुनिया के उम्रदराज लोगों की उम्र का राज क्या है?

आठ घंटे की नींद लें

मिसाओ ओकावा, उम्र-117 वर्ष

दुनिया में सबसे उम्रदराज व्यक्ति रही जापान की मिसाओ ओकावा का निधन 1 अप्रैल, 2015 को हुआ। वे कहती थी कि यदि जिंदगी लंबी करनी है तो समय से सो जाओ और 8 घंटे की नींद लो। न इससे ज्यादा न इससे कम।

सिगरेट से दूर रहें

सुजैना मसहट, उम्र-116 वर्ष

अमेरिका की सुजैना मसहट दुनिया की सबसे उम्रदराज शख्स है। इसका क्रेडिट वे अपनी आदतों को देती है, जिनमें एक्सरसाइज, अंडे खाना, मक्का खाना और सिगरेट से दूर रहना शामिल है।

अल्कोहल छोड़ें

साकारी मोमोई, उम्र-112 वर्ष

जुलाई, 2015 में जापान के साकारी मोमोई का निधन हुआ। उनका कहना था कि यदि लंबा और स्वस्थ जीवन जीना है तो अल्कोहल से दूर रहो। वे वॉक और एक्सरसाइज पर भी काफी जोर देते थे।

दलिया खाएं

जेसी गैलन, उम्र-107 वर्ष

स्कॉटलैंड की सबसे उम्रदराज महिला रही जेसी गैलन का मार्च में निधन हुआ। वे कहती थीं कि सुबह, दो चीज जरूर करो। पहली एक्सरसाइज और दूसरी नाश्ते में एक कटोरा दलिया खाओ।

और रिसर्च ये कहती है

वेज खाना शुरू करें-वेजिटेरियन डाइट लेने वाले लोगों में गंभीर बीमारी का खतरा 20% कम होता है।

हरियाली में वॉक करें-नेचर वॉक करना उम्र बढ़ाता है। 1 घंटे की जॉगिंग 6 साल उम्र बढ़ा सकती है।

व्यायाम से 3 साल बढ़ेंगी उम्र-कम से कम 15 मिनट रोजाना एक्सरसाइज करने से जीवन तीन साल बढ़ जाता है।

हँसने से 8 साल बढ़ेंगी उम्र-रोजाना 15 मिनट हँसे। हँसने से औसत आयु 8 साल तक बढ़ जाती है।

होल ग्रेन डाइट लें-होल ग्रेन डाइट लें। बीमारियों से मौत का खतरा 20% कम होता है।

(वैज्ञानिक शोधानुसार)

शारीरिक श्रम न करना धूम्रपान से भी अधिक रोग व मृत्यु का कारण

(चाल : तुम दिल की धड़कन में.....)

शारीरिक श्रम जो नहीं करते, रोग व मृत्यु को वे शीघ्र बुलाते।
कार्य सम्पादन भी वे कर न पाते, समय-शक्ति का वे दुरुपयोग करते।।
शरीर भी होता है जैविक मशीन, ईंधन व क्रिया न हो न्यून।

अन्यथा शरीर रूग्ण दुर्बल होगा, जिससे मरण शीघ्र संभव होगा।।
शारीरिक श्रम से शरीर सक्रिय होता, जिससे रक्त संचालन सुचारू होता।
प्राणवायु का ग्रहण होता पर्याप्त, विषाक्त तत्त्व की शरीर से निवृत्ति।।
गुड़ हारमोन का होता भी स्राव, बेड हारमोन भी होता निस्प्रभ।
जिससे तनमन (होते) स्वस्थ-सबल, ओज-वीर्य (बुद्धि) ताजगी होती प्रबल।।
शारीरिक श्रम बिना उक्त लाभ न होते, विपरीत प्रभाव भी अनेक होते।
जिससे अनेक रोग भी होते उत्पन्न, मोटापा डायबिटिज वात रोग विभिन्न।।
जिससे और भी रोग होते उत्पन्न, दैनिक कार्य भी होते (सही) सम्पन्न।
सक्रिय स्वावलंबी अतः बनो मानव, 'कनकनन्दी' इसलिए रचा ये काव्य।।

आसपुर, दिनांक 10.06.2015, मध्याह्न 2.37

पैदल चलने से तन-मन भी होते-स्वस्थ व सबल

(चाल : तुम दिल की धड़कन....., छोटी-छोटी गैया.....)

चरैवेति-चरैवेति पैदल चलो, तन-मन स्वस्थ-सबल करो...
जीव-पर्यावरण की सुरक्षा करो, वाहनों का आलंबन दूर (भी) करो...(ध्रुवपद)...
तीर्थंकर बुद्ध-ऋषि (भी) पैदल चले...अभी भी श्रमण-साधु पैदल चले...
पशु-पक्षी भी चलते पैदल-पैदल...वैज्ञानिक शोध से भी (इसे) मिलता बल...
चलने से सारा शरीर (का) होता व्यायाम...प्राणवायु/(ऑक्सीजन) का प्रचुर होता ग्रहण...
दूषित वायु स्वेद का होता निर्गमन...विषाक्त हारमोन का होता शमन...(1)
उत्तम हारमोन का होता सृजन...रक्त परिशोधन भी होता उत्तम...
जिससे अनेक रोगों का होता निर्गमन...अनेक रोगों का नहीं होता आगमन...
हृदय रोगों का प्रभाव होता शमन...तनाव डिप्रेशन भी होते हैं कम...
स्मरण शक्ति भी होती है (तीव्र) उत्तम...अस्थि भी होती है स्वस्थ व उत्तम...(2)
ब्रेन स्ट्रोक रोग भी होता है कम...मोटापा रोग भी होता है न्यून...
डायबिटीज रोग भी होता है शमन...ताजगी-स्फूर्ति भी होती उत्तम...
पाचन अग्नि भी होती उत्तम...उदर रोगों का भी होता शमन...
वात-पित्त-कफ भी होते हैं सम...निद्रा भी आती है मीठी उत्तम...(3)
प्रातः व शाम को चलना उत्तम...शांत शीतल स्थान मुक्त प्रदूषण...
एकाग्रचित्त शांत मन-युक्त...अनुशासन दया चित्त सहित...

आयुर्वेद में भी यह सब वर्णन हुआ...वैज्ञानिक शोधों से भी सिद्ध हुआ...
बाल्यकाल से भी मैंने अनुभव किया...'कनक' स्व-साहित्यों में वर्णन किया...(4)

पारडा ईटीवार, दिनांक 12.05.2015, पातः 8.15

सप्त व्यसन त्याग के धार्मिक वैज्ञानिक कारण

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. **मद्य व्यसन त्याग**

मद्य सेवन नहीं करेंगे...तम्बाखू की चीज नहीं खायेंगे।
हिंसा व रोग से हम बचेंगे...पर्यावरण की रक्षा करेंगे।
समय शक्ति/(धन) की रक्षा करेंगे...आदर्श स्वस्थ हम बनेंगे।। ला-ला-ला...

2. **मांस-व्यसन त्याग**

मांस सेवन नहीं करेंगे...अण्डा मछली नहीं खायेंगे।
चर्म की वस्तु त्याग करेंगे...बाजारू खाद्य ना खायेंगे।
नेलपॉलिश त्याग करेंगे...हिंसा की वस्तु काम न लेंगे।। ला-ला-ला...

3. **चोरी व्यसन त्याग**

चोरी (भी) हम ना करेंगे...ठगी मिलावट नहीं करेंगे।
भ्रष्टाचार भी नहीं करेंगे...जमाखोरी भी नहीं करेंगे।
चोरी का माल हम न लेंगे...कर्त्तव्य से अधिकार पायेंगे।। ला-ला-ला...

4. **परस्त्री गमन त्याग**

परस्त्री गमन नहीं करेंगे...बलात्कार से दूर रहेंगे।
परस्त्री कथा नहीं करेंगे...कामुक पिक्चर/(टी.वी.) नहीं देखेंगे।
अश्लील गाना नहीं सुनेंगे/(गायेंगे)...अभद्र वचन ना बोलेंगे।। ला-ला-ला...

5. **वेश्या व्यसन त्याग**

वेश्या गमन नहीं करेंगे...एड्स रोगी नहीं बनेंगे।
शीलवन्त हम बनेंगे...सदाचारी हम बनेंगे।
कामुकता से दूर रहेंगे...आदर्श जीवन हम जीयेंगे।। ला-ला-ला...

6. **शिकार व्यसन त्याग**

किसी की हत्या नहीं करेंगे...पशु-पक्षी की रक्षा करेंगे।
पर्यावरण की रक्षा करेंगे...प्रकृति प्रेमी हम बनेंगे।

अहिंसा धर्म हम पालेंगे...विश्व नागरिक हम बनेंगे।। ला-ला-ला...

7. जुआ खेलना त्याग

जुआ हम ना खलेंगे...सट्टा (व्यसन) से दूर रहेंगे।
तृष्णा आलस्य त्यागेंगे...समय धन ना हारेंगे।
सत-पुरुषार्थी बनेंगे...आत्मविकास करेंगे।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 20.06.2015, अपराह्न 5.55

नो बोल्ड-स्मार्ट व ब्युटिफूल!?

(चाल : सायोनारा....., तुम दिल की धड़कन.....)

बोल्ड स्मार्ट व ब्युटिफूल...नहीं बनना (है) हमें क्रिटिकल...
सिम्पल लाइफ हम जीयेंगे...हाई-होली-थिंकिंग करेंगे...(स्थायी)...

स्मोकिंग ड्रिंकिंग न करेंगे...बॉडी व माइण्ड फिट रखेंगे...
मेडिटेशन हम डेली करेंगे...मेमोरियस-जिनियस बनेंगे...(1)...

फैशन-व्यसन (हम) न करेंगे...आदर्श जीवन हम जीयेंगे...
ब्लाइण्ड फॉलोवर्स न बनेंगे...हीरो-हीरोइन न आदर्श मानेंगे...(2)...

स्टडी-रिसर्च हम करेंगे...तोता रटन्त हम न पढ़ेंगे...
स्वावलंबी आत्मानुशासी बनेंगे...उद्दण्ड उत्श्रृंखल न करेंगे...(3)...

शांत व शालीन हम बनेंगे...अपराधी/(अश्लील) बलात्कारी न बनेंगे...
संस्कार सदाचार हम पालेंगे...वैज्ञानिक धर्म हम पालेंगे...(4)...

ट्रूथ से स्ट्रांग हम बनेंगे...ग्लोबल नॉलेज हम करेंगे...
सोल को प्यूर हम करेंगे...सोल से नाइस हम बनेंगे...(5)...

उदार भावना हम रखेंगे...विश्व सिटीजन हम बनेंगे...
दक्ष व पुरुषार्थी हम बनेंगे...नकलची आधुनिक न बनेंगे...(6)...

स्वतंत्र-मौलिक हम बनेंगे...विश्व में पहिचान बनायेंगे...
प्रगतिशील-साम्यवादी बनेंगे...परम स्वाधीनता हम पायेंगे...(7)...

आत्मा को परमात्मा बनायेंगे...परम विकास को पायेंगे...
परम सफलता हम पायेंगे...'कनक' आत्मिक सुख पायेंगे...(8)...

आसपुर, दिनांक 11.06.2015, मध्याह्न 2.50

परिच्छेद-II

जैन धर्म का सामान्य परिचय

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. सच्चे देव अरिहन्त

अरिहन्त सच्चे देव है...उपदेश देते दिव्य है।
चार घाती से रहित है...अनन्त चतुष्टय सहित है।
अठारह दोषों से रहित है...छयालीस गुण सहित है।। ला-ला-ला...

2. सिद्ध भगवान्

सिद्ध होते शुद्ध है...सभी कर्मों से रहित है।
अनन्त गुण सहित है...अष्ट मूलगुण सहित है।
लोकाग्र में स्थित है...जन्म-मरण से रहित है।। ला-ला-ला...

3. चतुर्विध संघ नायक : आचार्य

आचार्य संघ नायक है...शिक्षा व दीक्षा दायक है।
छत्तीस गुण सहित है...अनुशासन गुण सहित है।
धीर वीर व गंभीर है...ज्ञानी-ध्यानी अपार है।। ला-ला-ला...

4. ज्ञानदाता : उपाध्याय

ज्ञानदाता पाठक है...पच्चीस गुण धारक है।
साधु संघ को पढ़ाते है...ज्ञान-विज्ञान सिखाते है।
समीक्षा समन्वय करते है...ज्ञानी गंभीर होते है।। ला-ला-ला...

5. आत्म साधक : साधु

साधु वैरागी होते है...मौन से साधना करते है।
अट्ठावीस मूलगुण पालते है...ज्ञानी-ध्यानी होते है।
निर्ग्रंथ श्रमण होते है...समता-शक्ति को पाते है।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 16.06.2015, प्रातः 8.45

श्रावक के षट्कर्म

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. **देवपूजा**

मंदिर नित्य जायेंगे...देव की पूजा करेंगे।
प्रभु के गुण गायेंगे...प्रभु स्मरण करेंगे।
उनके आदर्श मानेंगे...धर्म के मार्ग चलेंगे।। ला-ला-ला...

2. **गुरु उपासना (सेवा)**

गुरु की सेवा करेंगे...आहार दान करेंगे।
वैयावृत्ति करेंगे...उनकी आज्ञा मानेंगे।
उनसे शिक्षा पायेंगे...आदर्श जीवन जीयेंगे।। ला-ला-ला...

3. **स्वाध्याय**

स्वाध्याय हम करेंगे...सत्य-तथ्य को जानेंगे।
मोक्षमार्ग पहचानेंगे...आत्मविशुद्धि करेंगे।
पाप कर्म न करेंगे...ज्ञानी सज्जन बनेंगे।। ला-ला-ला...

4. **संयम**

संयमी हम बनेंगे...आत्मानुशासी बनेंगे।
जीवों की रक्षा करेंगे...इन्द्रिय मन को जीतेंगे।
फैशन-व्यसन त्यागेंगे...सदाचारी बनेंगे।। ला-ला-ला...

5. **तप**

तपस्या हम करेंगे...तृष्णा हम न करेंगे।
महान् लक्ष्य धरेंगे...सत् पुरुषार्थ करेंगे।
दुर्गुण हम त्यागेंगे...सुगुणी हम बनेंगे।। ला-ला-ला...

6. **त्याग**

त्याग हम करेंगे...सेवा दान करेंगे।
लोभ त्याग करेंगे...संतोषी हम बनेंगे।
त्यागी महान् बनेंगे...महान् आत्मा बनेंगे।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 21.06.2015, मध्याह्न 2.50

4 प्रकार के दान (दयादत्ती भी)

-आचार्य कनकनन्दी

1. **आहार दान**

आहार दान करेंगे...नवधाभक्ति करेंगे।
सप्तगुण सहित होंगे...साधु की सेवा करेंगे।
सातिशय पुण्य पायेंगे...स्वर्ग मोक्ष पायेंगे।। ला-ला-ला...

2. **औषधि दान**

औषधि दान करेंगे...(रोगी) साधु की सेवा करेंगे।
सर्दी-गर्मी दूर करेंगे...शरीर श्रम दूर करेंगे।
उपसर्ग दूर करेंगे...सातिशय पुण्य पायेंगे।। ला-ला-ला...

3. **ज्ञानदान**

ज्ञान दान करेंगे...साधु को शास्त्र देंगे।
ग्रंथ प्रकाशन करेंगे...ज्ञान प्रचार करेंगे।
ज्ञान उपकरण देंगे...ज्ञानी बन मोक्ष पायेंगे।। ला-ला-ला...

4. **वसतिका दान/अभयदान**

वसतिका दान करेंगे...संत निवास बनायेंगे।
अभयदान हम करेंगे...जीव सुरक्षा करेंगे।
पर्यावरण रक्षा करेंगे...विश्व में शांति लायेंगे।। ला-ला-ला...

5. **दयादत्ती**

रुग्ण (वृद्ध) की सेवा करेंगे...असहाय की सेवा करेंगे।
विकलांग की सेवा करेंगे...भोजन (पानी) दवा देंगे।
सांत्वना सहयोग करेंगे...परोपकारी हम बनेंगे।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 23.06.2015, मध्याह्न 2.24

सेवा-दान की महानता

(चाल : छिप गया कोई रे.....)

सेवा-दान महान् है, पापी नहीं करते...महान् पुण्यशाली ही, दोनों कार्य करते...
सेवा युक्त दान जो, करते वे महान्...दोनों से जो रिक्त होते, वे सब पापी जन...(स्थायी)...
निःस्वार्थ भाव से जो, सेवा-दान करते...स्व-पर-उपकार भी, वे जन करते...

इह-परलोक में भी, वे विकास करते...स्वर्ग से मोक्ष तक, वे प्राप्त करते...(1)
सेवाभावी नहीं दास, न होते वे नीच...माता जो सेवा करती, क्या वे होती नीच...
दान देना भी है सेवा, सेवा भी दान...दोनों का समन्वय तो, महान् काम...(2)
दोनों के कारण ही है, परिवार व्यवस्था...दोनों के कारण ही है, सामाजिक व्यवस्था...
दोनों के कारण ही है, विश्व नागरिकता...दोनों से बनती है, दान तीर्थ
/(धर्मतीर्थ) व्यवस्था...(3)
सातिशय पुण्य बंध, भी इससे होता...तीर्थंकर नामकर्म, भी इससे बंधता...
हर धर्म-देश में भी, इन्हें मिली मान्यता...दोनों से रहित जो, उनमें न मानवता...(4)
संतुष्टि शांति तृप्ति, दोनों से मिलती...तन-मन-आत्मा में, स्वस्थता आती...
प्रेम-संगठन व परस्पर, सहयोग बढ़ता...विश्वास-सहअस्तित्व में विकास होता...(5)
व्यापार संकीर्णता, भेदभाव रिक्त...यथायोग्य पात्रानुसार, दोनों ही विहित...
अयोग्य दान व सेवा, न करणीय... 'कनक' स्व-पर हेतु, द्वय सेवनीय...(6)

आसपुर, दिनांक 04.05.2015, अपराह्न 5.35

उत्तम आहार पद्धति

(चौका में सोला से आहार दान)

(चाल : जय हनुमान....., छोटी-छोटी गैया.....)

उत्तम चौका के स्वरूप जानो...द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव में मानो...
नवधाभक्ति-सप्त गुण है सोला (16)...उत्तम द्रव्यादि चतुष्टय है चौका...(1)...
द्रव्य होता है भोजन व पात्र...प्रदूषण रहित होता है क्षेत्र...
दिवस में योग्य आहार काल...सप्त गुणादि सोला होता है भाव...(2)...
जैविक खेती से उत्पन्न अन्न...फल सब्जी व मसाला विभिन्न...
प्राकृतिक व ताजा होना चाहिए...रसायन प्रयोग न होना चाहिए...(3)...
धोकर साफ भी करना चाहिए...साबुत या मोटा आटा चाहिए...
सब्जी-फल को भी मोटा बनाये...योग्य छिलका सहित बनाये...(4)...
अधकच्चा-अधपका भी अभक्ष्य होता...परिपक्व भक्ष्य व स्वास्थ्यप्रद होता...
भात में माड़ रहना ही चाहिए...सब्जी भी झोलदार योग्य चाहिए...(5)...
एलुमीनियम बर्तन नहीं चाहिए...प्लास्टिक वस्तु भी नहीं चाहिए...
गैस व स्टोव से नहीं बनावे...रात्रि में कोई वस्तु नहीं बनावे...(6)...

पात्र की आयु व प्रकृति अनुसार...उत्तम रीति से देवे आहार...
पथ्य-अनुमान व मात्रानुसार...सप्त गुण युक्त हो देवे आहार...(7)...
दाता हो सोलह गुणों से युक्त...तन-मन-वचन व वस्त्र शुद्ध...
नेलपॉलिश लिपिस्टिक से रिक्त...हाथ व नाखून स्वच्छता युक्त...(8)...
क्षेत्र हो प्रासुक प्रकाश युक्त...प्रदूषण रहित स्वच्छता युक्त...
शांत-शीतल पवन सहित...जीव-जंतु व दुर्गंध रहित...(9)...
आहार दान से लाभ अनेक...दान-सेवा-वैयावृत्ति-पात्र लाभ...
चारों दान भी होते गर्भित...सांसारिक सुख व मोक्ष प्राप्त...(10)...
भाव हो निर्मल समता सहित...आत्म-विकास के भाव सहित...
यह है उत्तम आहार पद्धति...'कनक' को चाहिए योग्य पद्धति...(11)...

पाड़वा, दिनांक 14.07.2015, प्रातः 8.45

पंच व्रत पालन

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. **अहिंसा व्रत पालन**
   हम अहिंसक बनेंगे...जीवों की रक्षा करेंगे।
   शाकाहारी बनेंगे...फैशन-व्यसन न करेंगे।
   दया दान सेवा करेंगे...पर्यावरण रक्षा करेंगे।। ला-ला-ला...
2. **सत्य व्रत पालन**
   सत्य हम बोलेंगे...प्रामाणिक भी बनेंगे।
   निन्दा चुगली न करेंगे...सत्य तथ्य को मानेंगे।
   मायाचारी न करेंगे...सत्य वचन पालेंगे।। ला-ला-ला...
3. **अचौर्य व्रत पालन**
   चोरी हम न करेंगे...शोषण-मिलावट न करेंगे।
   भ्रष्टाचार न करेंगे...कर्त्तव्य पालन करेंगे।
   जमाखोरी न करेंगे...अन्य को भी न ठगेंगे।। ला-ला-ला...
4. **अपरिग्रह व्रत पालन**
   लोभी हम न बनेंगे...अपरिग्रही बनेंगे।

जमाखोरी न करेंगे...प्रकृति शोषण न करेंगे।
दान व त्याग करेंगे...संतोषी सुखी बनेंगे।। ला-ला-ला...

5. **ब्रह्मचर्य व्रत पालन**

शीलवन्त हम बनेंगे...स्वस्थ सबल बनेंगे।
ब्रह्मचर्य हम पालेंगे...अणु-महाव्रत पालेंगे।
महामानव बनेंगे...अंत में भगवान् बनेंगे।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 20.06.2015, रात्रि 9.52

विश्व के मूल 6 द्रव्य

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. **जीव द्रव्य**

चेतनामय होते जीव...अनंतानंत होते जीव।
संसारी होते कर्म युक्त...शुद्ध/(सिद्ध) होते कर्म मुक्त।
हम भी शुद्ध बनेंगे...कर्म से मुक्त होयेंगे।। ला-ला-ला...

2. **पुद्गल द्रव्य**

रूपी होते है पुद्गल...अणु व स्कन्ध पुद्गल।
होते स्पर्श रस युक्त...गंध व वर्ण सहित।
तेइस वर्गणायें होती...(कर्म) प्रकृतियाँ पुद्गल होती।। ला-ला-ला...

3. **धर्म द्रव्य**

गति सहायक होता धर्म...जीव पुद्गल जब गतिमान।
स्वयंभू सनातन धर्म (द्रव्य)...अमूर्तिक व अचेतन।
लोकाकाश में व्याप्त...प्रदेश असंख्यात।। ला-ला-ला...

4. **अधर्म द्रव्य**

स्थिति सहायक अधर्म (द्रव्य)...जीव पुद्गल जब (होते) स्थित।
स्वयंभू सनातन द्रव्य...अमूर्तिक व अचेतन।
लोकाकोश में व्याप्त...प्रदेश असंख्यात।। ला-ला-ला...

5. **आकाश द्रव्य**

सर्वव्यापी आकाश (द्रव्य)...लोक-अलोक में व्याप्त।

अनंत प्रदेशी यह द्रव्य...स्वयंभू सनातन।
अवकाश दाता द्रव्यों का...अमूर्तिक व अजीव।। ला-ला-ला...

6. **काल द्रव्य**

काल द्रव्य (होते) असंख्यात...अमूर्तिक व अचेतन।
स्वयंभू सनातन (द्रव्य)...परिणमन में निमित्त।
समय (दिन) आदि व्यवहार काल...भूत-भावी-वर्तमान।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 22.06.2015, मध्याह्न

सप्त-तत्त्व व नव-पदार्थ

-आचार्य कनकनन्दी

1. **जीव तत्त्व**

जीव तत्त्व का ज्ञान करेंगे...चेतनामय मानेंगे।
संसारी मुक्त रूप जानेंगे...अनंत (अनंत) दोनों मानेंगे।
संसारी होते कर्म से युक्त...मुक्त होते कर्म विमुक्त।। ला-ला-ला...

2. **अजीव तत्त्व**

चेतना रिक्त होते अजीव...पुद्गल आदि पाँचों अजीव।
पुद्गल धर्म-अधर्म काल...आकाश सह पाँचों अजीव।
विश्व रचना में देते सहयोग...अनंत गुण युक्त अजीव।। ला-ला-ला...

3. **आस्रव तत्त्व**

कर्म आगमन होता आस्रव...भावास्रव व द्रव्यास्रव।
विभाव भाव है (जीव के) भावस्रव...कर्म परमाणु द्रव्यास्रव।
आत्मप्रदेशों के कम्पन्न द्वारा...द्रव्यास्रव होता जीव के द्वारा।। ला-ला-ला...

4. **बंध तत्त्व**

आस्रव के बाद बंध होता...आत्मप्रदेश व कर्मों का होता।
विभाव भाव है भावबंध...कर्म परमाणु द्रव्यबंध।
संख्यात असंख्यात होते बंध...इसी से चलता संसार प्रबंध।। ला-ला-ला...

5. **पुण्य पदार्थ**

प्रशस्त होता पुण्यकर्म...भाव व द्रव्य होता कर्म।
आत्मा को पावन करे पुण्य...शुभ भाव है भाव-पुण्य।

भाव-पुण्य से द्रव्य-पुण्य...स्वर्ग मोक्ष के कारण पुण्य।। ला-ला-ला...

6. **पाप पदार्थ**

अप्रशस्त होता है पाप...भाव-द्रव्य होता पाप।
आत्मा को पतित करे सो पाप...अशुभ भाव है भाव-पाप।
भाव-पाप से (बंध) द्रव्य पाप...दुर्गति कारक होता पाप।। ला-ला-ला...

7. **संवर तत्त्व**

कर्मों को रोकना होता संवर...भाव-द्रव्य होता संवर।
आत्म-परिणाम भाव-संवर...कर्म का रोकना द्रव्य संवर।
इसी से संसार नहीं बढ़ता...इसी से युक्त होती निर्जरा।। ला-ला-ला...

8. **निर्जरा तत्त्व**

संवर पूर्वक निर्जरा होती...भाव-द्रव्य निर्जरा होती।
आत्म परिणाम भाव-निर्जरा...कर्म परमाणु निर्गमन निर्जरा।
आंशिक कर्म की होती निर्जरा...मोक्ष कारक संवर-निर्जरा।। ला-ला-ला...

9. **मोक्ष तत्त्व**

सम्पूर्ण कर्म नष्ट है मोक्ष...भाव द्रव्य मय होता मोक्ष।
शुद्ध परिणाम भाव-मोक्ष...कर्मों का क्षय द्रव्य-मोक्ष।
मोक्ष ही जीवों का निज स्वभाव...शुद्ध-बुद्ध आनंद स्वभाव।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 25.06.2015, मध्याह्न 3.20

कर्म सिद्धांत (बंध के कारण)

-आचार्य कनकनन्दी

संसार कारक होते (है) कर्म...द्रव्य कर्म व भावकर्म।
राग द्वेष मोह भावकर्म...कर्म परमाणु द्रव्यकर्म।
परस्पर कार्य कारण होते...अनादि शृंखला के बंधते।। ला-ला-ला...

1. **ज्ञानावरणीय कर्मबंध**

ज्ञानावरणीय ज्ञान को ढ़कता...इसी से (जीव) होते अल्पज्ञ।
ज्ञान-ज्ञानी से द्वेष (जो) करे...ज्ञानावरणीय कर्म को वरे।
ज्ञानदान जो नहीं करे...वे भी इस कर्म को वरे।। ला-ला-ला...

2. **दर्शनावरणीय कर्मबंध**

दर्शन को ढ़कता दर्शनावरणीय...दर्शन से वंचित होता जीव।
इसी के हेतु होते पूर्वोक्त...ज्ञानावरणीय कर्म में (जो) उक्त।
दर्शन पूर्वक होता (है) ज्ञान...सर्वज्ञ को दोनों युगपत् (एक साथ)।।
(सर्वज्ञ के दर्शन उपयोग व ज्ञानोपयोग एक साथ होता)...ला-ला-ला...

3. मोहनीय कर्मबंध

अ. दर्शन मोहनीय कर्मबंध

मोहित करे सो मोहनीय...कर्म चक्री मोहनीय।
धर्म का करे जो अवर्णवाद...केवली-श्रुत-संघ अवर्णवाद।
उसको बंधता यह कर्म...निंदा अपमान घृणित कर्म।। ला-ला-ला...

ब. चारित्र मोहनीय कर्मबंध

चारित्र घातक मोहनीय...चारित्र करता प्रतिबंधन।
तीव्र कषाय परिणाम से...बंधता यह चारित्र मोह।
क्रोध मान माया लोभादि...परिणत जीव ये कर्म।। ला-ला-ला...

4. वेदनीय कर्मबंध

अ. असाता वेदनीय (पाप कर्म)

दुःख प्रदाता असाता कर्म...(इससे) संसारी पाते अशर्म (दुःख)।
स्व-पर को जो देते कष्ट...वे बांधते दुष्ट (ये) कर्म।
दुःख शोक व ताप बंध से...असाता बंधे अशुभ (भाव) से।।
ला-ला-ला...

ब. साता वेदनीय (पुण्य कर्मबंध)

सुख प्रदाता साता कर्म...संसारी पाते इसी से शर्म (सुख)।
दान दया सराग संयम...शौच से बंधे पुण्य कर्म।
पाप कर्म से ये विपरीत...स्व-पर को न देते दुःख।। ला-ला-ला...

5. आयु कर्मबंध

बहु आरंभ परिग्रह से...नरकायु का होता बंध।
माया से तिर्यंच आयु...मृदु संतोष से मनुष्यायु।
शुभ भाव से देवायु...लेश्या परिणाम से (बंध) आयु।। ला-ला-ला...

6. नाम कर्मबंध

कुटिल भाव विसंवाद से...नाम कर्म बंधे अशुभ।

अविसंवाद सरलता से...नाम कर्म बंधे शुभ।
नाम कर्म से बने शरीर...कर्मानुसार शुभ-अशुभ।। ला-ला-ला...

7. गोत्र कर्मबंध

दूसरों की निंदा अहंकार से...नीच गोत्र का होता बंध।
निंदा रहित नम्र भाव से...उच्च गोत्र का होता बंध।
मोक्ष सहायक उच्च गोत्र...इसी से विपरीत नीच गोत्र।। ला-ला-ला...

8. अंतराय (विघ्नकारक) कर्मबंध

विघ्न उत्पादक अंतराय...शुभ कार्य बाधक (यह) विघ्न।
दान लाभ भोग उपभोग...ज्ञानार्जन (वीर्य) में डाले (जो) विघ्न।
उससे बंधता विघ्न कर्म...घाती रूपी अनिष्ट कर्म।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 28.06.2015, प्रातः 8.15

4 कषायों का त्याग

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. क्रोध विभाव त्याग

क्रोध विभाव न करेंगे...क्षमा भाव धरेंगे...
वैर-विरोध न करेंगे...कलह-विघटन न करेंगे...
पाप कर्म से बचेंगे...रोग-दुःखों से बचेंगे...ला-ला-ला...(1)

2. मान विकार त्याग

अहंकार न करेंगे...अष्ट मद से दूर रहेंगे...
सत्यग्राही बनेंगे...गुरु/(गुणियों) का सम्मान करेंगे...
छोटों का आदर करेंगे...नम्रता से आगे बढ़ेंगे...ला-ला-ला...(2)

3. माया कषाय त्याग

मायाचारी न करेंगे...सरल भाव रखेंगे...
मिलावट-ठगी न करेंगे...त्रय योग से सच्चे होंगे...
नकलची नहीं बनेंगे...तिर्यंच गति न जायेंगे...ला-ला-ला...(3)

2. लोभ कषाय त्याग

संतोष भाव धरेंगे...लोभी बापड़ा न बनेंगे...

परिग्रह पाप न करेंगे...भ्रष्टाचार/(शोषण) न करेंगे...
संतोषी सुखी बनेंगे...नरक गति न जायेंगे...ला-ला-ला...(4)

5. अंध श्रद्धान त्याग

अंध श्रद्धानी न बनेंगे...मिथ्यात्व भाव छोड़ेंगे...
सत्य-तथ्य को मानेंगे...तत्त्वार्थ श्रद्धान करेंगे...
देव-शास्त्र-गुरु मानेंगे...सम्यग्दृष्टि बनेंगे...ला-ला-ला...(5)

आसपुर, दिनांक 26.06.2015, रात्रि 12.22

(यह कविता साध्वी सुवत्सलमती आर्या के कारण बनी।)

वैश्विक 10 धर्म

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : लकड़ी की काठी.....)

1. उत्तम क्षमा धर्म

क्षमा धारण करेंगे...क्रोध भाव ना धरेंगे।
क्षमा प्रदान करेंगे...क्षमा याचना करेंगे।
स्वस्थ व शांत बनेंगे...सहिष्णु हम बनेंगे।। ला-ला-ला...

2. मार्दव (नम्रता) धर्म

मृदु हम बनेंगे...मार्दव धर्म पालेंगे।
अहंकार न करेंगे...सत्यग्राही बनेंगे।
नम्र हम बनेंगे...ज्ञानी महान् बनेंगे।। ला-ला-ला...

3. आजर्व (सरलता) धर्म

मायाचार न करेंगे...सरल सादा बनेंगे।
मिलावट न करेंगे...प्रामाणिक बनेंगे।
विश्वासघात न करेंगे...शांत-सुखी बनेंगे।। ला-ला-ला...

4. शौच धर्म

लोभ त्याग करेंगे...शौच धर्म पालेंगे।
चोरी शोषण न करेंगे...भ्रष्टाचार न करेंगे।
जमाखोरी न करेंगे...परिग्रही न बनेंगे।। ला-ला-ला...

5. **सत्य धर्म**

सत्य हम कहेंगे...सत्य-तथ्य (को) मानेंगे।
हित-मित बोलेंगे...प्रिय-मधुर बोलेंगे।
सत्यग्राही बनेंगे...परम सत्य को चाहेंगे।। ला-ला-ला...

6. **संयम धर्म**

संयम धर्म पालेंगे...जीवों की रक्षा करेंगे।
इन्द्रिय जय करेंगे...मन को वश में करेंगे।
आत्मानुशासी बनेंगे...स्वावलंबी बनेंगे।। ला-ला-ला...

7. **तप धर्म**

तप धर्म पालेंगे...तृष्णा नहीं करेंगे।
महान् लक्ष्य धरेंगे...महान् पुरुषार्थ करेंगे।
स्व-दोष दूर करेंगे...पावन हम बनेंगे।। ला-ला-ला...

8. **त्याग धर्म**

त्यागी हम बनेंगे...क्षुद्रता को त्यजेंगे।
महान् भाव धरेंगे...(भोगी) विलासी न बनेंगे।
संकीर्ण स्वार्थ त्यागेंगे...परमार्थी हम बनेंगे।। ला-ला-ला...

9. **आकिंचन धर्म**

आध्यात्मिक लक्ष्य धरेंगे...महान् साधना करेंगे।
विरागी संत बनेंगे...समता शक्ति पायेंगे।
कर्म को नष्ट करेंगे...सिद्ध-बुद्ध बनेंगे।। ला-ला-ला...

10. **ब्रह्मचर्य धर्म**

ब्रह्मचारी बनेंगे...ब्रह्म की साधना करेंगे।
ब्रह्म स्वरूप बनेंगे...ब्रह्मानंद पायेंगे।
चिदानंद बनेंगे...'कनक' आत्मा में रमेंगे।। ला-ला-ला...

आसपुर, दिनांक 21.06.2015, अपराह्न 5.24
(अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस पर विशेष)

परिच्छेद-III (गद्य विभाग)

छोटी सी कृति की विश्वमूर्ति

जैसा कि छोटा सा वट बीज में विशाल वटवृक्ष समाहित है वैसा ही इस छोटी सी कृति में जीवन रूपी विशाल वृक्ष के स्वास्थ्य, सुख, सफलता, शांति के उपायभूत सामान्य ज्ञान के बीज निहित है। जैसा कि छोटा सा वट बीज को योग्य खाद, पानी आदि से विशाल वटवृक्ष बनाया जा सकता है वैसा ही योग्य रूचि-श्रद्धा-प्रज्ञा-पुरुषार्थ के माध्यम से इस कृति में निहित सामान्य ज्ञान रूपी बीज को स्वयं में विकास करते हुए स्वयं को भौतिक विश्व से भी महान् बना सकते है। जब वट बीज जमीन में पड़ा रहता तब प्रायः दिखाई तक नहीं देता है किन्तु जब योग्य खाद-पानी आदि को प्राप्त करके विशाल वृक्ष बनता है तो मीलों दूर से भी दिखाई देता है। वैसा ही जब कोई इस छोटी सी कृति में निहित सामान्य ज्ञान के द्वारा स्वयं को समृद्ध बनाएगा तो वह दूर दुनिया से भी दिखाई देने योग्य महान् बन जायेगा। मिलिग्रामों का भी वट बीज सैकड़ों टन का वृक्ष जैसा बन जाता है वैसा ही इस कृति के ज्ञान से व्यक्ति अनंत गुणा महान् बन जायेगा। इस दृष्टि से इस कृति में निहित सामान्य ज्ञान वस्तुतः असामान्य ज्ञान है क्योंकि इस ज्ञान से व्यक्ति जीव से जिनेन्द्र, पतित से पावन, नर से नारायण, सामान्य से असामान्य, अज्ञ से विशेषज्ञ, बुद्धू से बुद्ध, असफल से सफल, अकर्मण्य से निष्कर्म, मृत से अमृत, गुलाम से मालिक, अस्त-व्यस्त-अस्वस्थ्य से व्यस्त-मस्त-स्वस्थ्य बन सकता है। ऐसा ज्ञान ही सामान्य ज्ञान है न कि किसी भी सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि वाले व्यक्ति, तिथि, घटना, भौगोलिक क्षेत्र, ऐतिहासिक स्थल आदि की जानकारी। क्योंकि इस जानकारी से व्यक्ति उपरोक्त असाधारण विशेषताओं को प्राप्त नहीं कर सकता है। उपरोक्त विशेषताओं को अखिल मानव प्राप्त करे ऐसी महती भावना से प्रेरित होकर इस कृति की रचना की गई है।

आचार्य कनकनन्दी
दिनांक 07.07.2010, रात्रि 11.30
रामगढ़ (राज.)
(प्रथम संस्करण से)

जीवनोपयोगी सामान्य ज्ञान

(स्वास्थ्य-सुख-सफलता-शांतिमय जीवन के सूत्र)

प्रथम कक्षा-आदर्श दैनिक चर्या

(1) प्रातःकालीन चर्या-जल्दी सोने से एवं जल्दी उठने से मानव स्वस्थ, सबल, सम्पन्न, सही जीवन जीने वाला होता है अतः सूर्य अस्त के 2-3 घंटे के बाद सोना चाहिए एवं सूर्य उदय के 1-2 घंटे पहले जाग जाना चाहिए।

(2) सोने की पद्धति-सोने के पहले हाथ, पैर, मुँह धोकर, कुल्ला कर तथा साफ कपड़े से पोछकर सोना चाहिए। उत्तर दिशा की ओर सिर करके सोने से दुःस्वप्न (बुरे स्वप्न) आते है, रोग होता है, बुद्धि कम होती है, अतः इस दिशा की ओर सिर करके नहीं सोना चाहिए। सोने से पूर्व अच्छे चिन्तन, भगवान् का स्मरण करते हुए पहले चित होकर शवासन में कुछ समय (2-3 मिनट) फिर दाएँ करवट (4-5 मिनट) तथा अंत में बाएँ करवट सोना चाहिए। अधिक मुलायम (नरम) गद्देदार, मोटा गद्दे में सोने से रीढ़ की हड्डी टेढ़ी हो जाती है, तंत्रिका-तंत्र के ऊपर खराब प्रभाव पड़ता है, अनेक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ उत्पन्न होती है अतः कम गद्देदार, साफ कंथा (गोदड़ी/कथड़ी), चटाई आदि में तकिया के ऊपर सिर रखकर सोना चाहिए। तकिया इतना ही मोटा होना चाहिए जिससे शरीर के भाग से सिर थोड़ा ही ऊपर रहे। सोते समय हाथ छाती के ऊपर रखने से श्वास क्रिया, रक्त संचालन आदि में बाधा पहुँचती है जिससे दुःस्वप्न आते है, खर्राटे की आवाज आती है, स्वास्थ्य संबंधी समस्या होती है अतः छाती पर न हाथ रखकर सोना चाहिए न ही छाती के बल पर औंधा (उल्टा) होकर सोना चाहिए। सिर (मुँह) को ढाँककर सोने से प्राणवायु पर्याप्त नहीं मिलती, चेहरा और ओठ फटते है, इसलिए सिर ढाँककर नहीं सोना चाहिए। सोने में जीवन के 1/3 भाग समय खर्च होता है और सोने से स्वास्थ्य लाभ, बुद्धि एवं स्मरण शक्ति में वृद्धि होती है, थकान-चिन्ता दूर होकर ताजगी-स्फूर्ति आती है अतः शयन (सोने) का कक्ष साफ, प्रदूषण से रहित, शांत, सुगंधित, सुंदर, हवादार होना चाहिए। सोते समय अधिक प्रकाश होने से सुखप्रद एवं गहरी नींद नहीं आती है, उत्तेजना (आवेग) आती है, दृष्टि शक्ति मंद पड़ती है अतः अंधेरा या कम प्रकाश में सोना चाहिए। सोने से पूर्व मल-मूत्र के वेग से निवृत्त होकर सोना चाहिए। गर्मी के दिनों में खुले आकाश में स्वच्छ स्थान पर सोना चाहिए।

(3) सोकर उठने की प्रक्रिया–सोकर उठने के लिए बाएँ करवट नीचे करके धीरे से शांति से उठना चाहिए। फिर पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके भगवान् का स्मरण करके, विश्व मंगल की कामना करनी चाहिए तथा अपना महान् उद्देश्य के बारे में विचार करके दैनिक कर्त्तव्य की योजनाएँ प्राथमिकता के आधार पर निर्णय करके अगले कार्य के लिए तैयार होना चाहिए। नासिका (नाक) के जिस स्वर में श्वास क्रिया उस समय चल रही हो उस भाग के पैर को पहले जमीन में रख करके शय्या (बिस्तर) त्याग करना चाहिए। शय्या को झाड़कर तह लगाकर व्यवस्थित रखकर आगे की क्रिया करनी चाहिए।

(4) शरीर-सफाई की क्रिया–ऊपर की क्रिया के बाद प्रासुक ठंडा साफ पानी से मुख भरकर दोनों आँखों को खोलकर 15-20 बार धीरे से आँखों में छींटा लगाना चाहिए, फिर मुख का पानी निकाल देना चाहिए। इसके बाद निर्जीव, शांत, एकांत, साफ जगह में दिन में हो तो उत्तर दिशा की ओर और रात हो तो दक्षिण दिशा की ओर मुख करके गाय दोहने की मुद्रा (आसन) में बैठकर मौनपूर्वक दाँतों को परस्पर सटाकर (दोनों दंत पंक्ति को हल्का सा दबाव देकर) मल-मूत्र त्याग करना चाहिए। मल-मूत्र त्याग में अधिक दबाव नहीं डालना चाहिए, मल त्याग में अधिक दबाव डालने से भगन्दर रोग होने की संभावना होती है। शारीरिक मल वेग (मल, मूत्र, खांसी, छींक, जंभाई, अधोवायु, आँसु आदि) को न रोकना चाहिए, न ही अधिक दबाव देकर निकालना चाहिए। मल-मूत्रादि त्याग के बाद साफ मिट्टी (पत्थर) के ढेले से गुदा द्वार के मल को साफ करके पुनः स्वच्छ (साफ) पानी से 4-5 बार स्वच्छ मिट्टी या राख से धोना चाहिए, मूत्रद्वार को भी पानी से स्वच्छता से धोना चाहिए। मल-मूत्र त्याग के समय छोटे, हल्के, ढीले वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए। जिस वस्त्र को पहिनकर मल त्याग किया जाता है उस वस्त्र से भोजन, अध्ययन, पूजन आदि नहीं करना चाहिए तथा मल त्याग के बाद में उस वस्त्र को धोकर साफ करना चाहिए।

(5) मुखशुद्धि (दाँत साफ करना)–शौचादि क्रिया के बाद नीम, देशी बबूल, करंज, अपामार्ग आदि की नरम नकड़ी के दंतवन से मुखशुद्धि करना चाहिए। दांतून के एक भाग को दाँत से चिबाकर मृदु, बारीक, रेशेदार बनाकर दोनों दंत पंक्ति को ऊपर-नीचे और अगल-बगल तथा अंदर-बाहर से थोड़ा रगड़कर दबाव देकर साफ करना चाहिए। मध्य-मध्य में पानी से कुल्लाकर साफ करते रहना चाहिए। पूरा

साफ होने के बाद दातून को दो भाग में फाड़कर जीभ को साफ करना चाहिए फिर अनेक बार (6-7 बार) कुल्ला करके पूरा मुख साफ करना चाहिए। इससे मुख रोग, दाँत रोग नहीं होते है, बदबू नहीं आती है, भूख लगती है, भोजन अच्छा लगता है, दाँत मोती के जैसे चमकते है, जिससे सुंदरता बढ़ती है। अधिकांश टूथपेस्ट में हड्डी के अंश, हानिकारक रसायन आदि होने तथा प्लास्टिक के ब्रश भी दाँत के लिए हानिकारक होने से इन सबका प्रयोग स्वास्थ्य, अहिंसा, पर्यावरण सुरक्षा आदि के प्रतिकूल है, अतः इन सबका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(6) नाक शुद्धि-यदि जलनेती, सूत्रनेती आदि यौगिक क्रिया आती है तो अति उत्तम है, नहीं तो प्रासुक, स्वच्छ, ठंडा पानी अंजुलि में लेकर नाक के दोनों नथुनों से धीरे से खींचना चाहिए फिर उस पानी को निकाल देना चाहिए। ऐसा 7-8 बार करना चाहिए। इससे नाक साफ होता है, नाक से बदबू नहीं आती है, साइनस आदि रोग नहीं होते है, स्मरण शक्ति बढ़ती है, सिरदर्द नहीं होता, नाक में पपड़ी नहीं जमती है, खुजली नहीं आती है।

(7) स्नान क्रिया (नहाना)-छना हुआ, प्रासुक, शुद्ध, ठंडा पानी से शरीर को मोटा साफ, सूती तौलिया (टॉवेल) से रगड़-रगड़कर स्नान करना चाहिए। हिंसात्मक हानिकारक रसायन से युक्त, रोगकारक साबुन, शैम्पू आदि का प्रयोग नहीं करके मुलतानी मिट्टी, सिकाकाई, बेसन, घर के शुद्ध शाकाहारी चीजों का ही प्रयोग करना चाहिए। अनावश्यक अधिक पानी का भी प्रयोग नहीं करना चाहिए। गरम पानी से स्नान करने से तैलग्रंथी सुख जाती है जिससे चमड़ी (चर्म) खुरदरी, बेजान हो जाती है, सर्दी के समय अधिक सर्दी लगती है, नजला-खाँसी-जुकाम हो जाती है, भूख कम लगती है, ताजगी-स्फूर्ति कम आती है। यदि सर्दी के दिनों में गरम पानी प्रयोग करना है तो कुनकुना पानी प्रयोग करना चाहिए किन्तु सिर में कभी भी गरम पानी प्रयोग नहीं करना चाहिए। सिर में गरम पानी प्रयोग करने से दृष्टि शक्ति कम होती है, स्नायुतंत्र दुर्बल होता है, सिरदर्द होने की संभावना रहती है, नजला-खाँसी-जुकाम भी हो सकता है। स्नान के बाद साफ तौलिये से रगड़कर सिर, शरीर पोछ लेना चाहिए।

व्यायाम, चलकर आने के बाद, शारीरिक श्रम के बाद, शरीर में पसीना है तो स्नान नहीं करना चाहिए, हाथ-पैर-मुँह नहीं धोना चाहिए। शरीर ठंडा होने के बाद, पसीना सूख जाने के बाद, थकान कम होने के बाद ही स्नानादि करना चाहिए,

अन्यथा नजला-खाँसी-जुकाम-बुखार-सिरदर्द, दृष्टि शक्ति की मंदता आदि सामान्य रोग से लेकर भयंकर रोग भी संभव है। स्नान के पहले शरीर अधिक गंदा नहीं हो तो पूर्ण शरीर एवं सिर में तिल्ली आदि के शुद्ध तैल से मालिश करके स्नान करना चाहिए।

(8) प्रातः भ्रमण, व्यायाम, योगासन, प्राणायाम–प्रातःकाल वातावरण स्वच्छ, शांत, प्रदूषण रहित होने से तथा उपर्युक्त क्रियाओं से शरीर शुद्ध एवं हल्का होने से प्रातःकाल एकांत, प्राकृतिक वातावरण में भ्रमण करना चाहिए। विभिन्न योगासन एवं प्राणायाम करना चाहिए जिससे शारीरिक संचालन, रक्तशुद्धि, प्राणवायु का अधिक ग्रहण एवं अशुद्ध वायु का शरीर से निष्कासन हो जाता है। इसके कारण शरीर स्वस्थ, सबल, कार्यक्षम, स्फूर्तिला, लचीला, सुंदर बनता है और बुढ़ापे के लक्षण शीघ्र प्रगट नहीं होते है। अशुद्ध, प्रदूषित, गंदे, बदबूदार, तंग, वायु एवं सूर्य किरण संचार से रहित, कोलाहल से युक्त स्थान में उपर्युक्त व्यायाम आदि नहीं करना चाहिए। इससे उपर्युक्त लाभ के बदले हानि होने की संभावना अधिक है। शरीर की शक्ति के अनुसार व्यायाम आदि करना चाहिए, अधिक करने से हानि होने की संभावना है। धीरे-धीरे अभ्यास करते हुए व्यायाम आदि को बढ़ाना चाहिए, व्यायाम करते समय मुँह से श्वास नहीं लेना चाहिए। कोई-कोई मल-मूत्र विसर्जन के बाद उपर्युक्त व्यायाम आदि क्रिया करते है उसके बाद विश्रामादि करके स्नानादि क्रिया करते है। स्नानादि क्रिया करने के बाद यदि व्यायाम करना है तो विश्राम करके पसीना सूखने के बाद पुनः सामान्य स्नान, शरीर शुद्धि आदि क्रिया करनी चाहिए। गर्मी में 2-3 बार स्नान करने से गर्मी कम लगती है, शरीर से बदबू नहीं आती है, घमौरियाँ, सिरदर्द, चक्कर आना, भूख नहीं लगना आदि समस्या कम होती है।

(9) पोषाक पहनना–स्नान के बाद स्वच्छ, सूखा, धुला हुआ सूती वस्त्र पहनना चाहिए। भारत एक गरम प्रधान, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक देश होने के कारण सर्दी के दिनों को छोड़कर अन्य दिनों में सफेद या हल्का रंग के ढीले सूती वस्त्र पहनना चाहिए। सर्दी के दिनों में मोटा, रंगीन, चुस्त वस्त्र भी योग्य हो सकता है किन्तु चर्म, रेशम, रोमज (ऊनी), पक्षी के पर (पंख) से निर्मित तथा और भी हिंसाकारक, पर्यावरण प्रदूषक, अशालीन, अभद्र, भद्दे, उत्तेजक, सज्जन लोगों के लिए अयोग्य, काम-उत्तेजक, अर्द्धनग्नकारक वस्त्र तथा टाई अयोग्य है। छोटे बच्चों के लिए सूट, बूट, टाई, चुस्त पोषाक आदि जो रक्त संचालन, शरीर की वृद्धि, सूर्य किरण एवं वायु संचार, खेलने, कूदने, चलने, दौड़ने, सोने, बैठने, उठने के लिए अयोग्य है उसे भी

प्रयोग नहीं करना चाहिए। पॉलिस्टर आदि कृत्रिम वस्त्र एवं कृत्रिम रंग के रंगाये गए वस्त्र भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। भारतीय प्राचीन हस्तनिर्मित सूती वस्त्र, धोती, दुपट्टा, साड़ी, पगड़ी आदि अहिंसक, स्वास्थ्यकर, पर्यावरण सुरक्षक आदि होने से आधुनिक कृत्रिम, हिंसाकारक, अस्वास्थ्यकर, अश्लील, भद्दे पोषाक से श्रेष्ठ है।

(10) आध्यात्मिक साधना–उपरोक्त प्रायः सम्पूर्ण क्रियाएँ मुख्यतः शरीर की शुद्धि, स्वस्थता के लिए है। परन्तु मानव केवल भौतिक हड्डी-माँस-चर्म का शरीर नहीं है। शरीर तो केवल आधार है। मानव शरीर से भी अधिक इन्द्रिय-मन-आत्मामय है। अतएव इन सबको भी स्वस्थ, सबल, सक्रिय बनाना शरीर को स्वस्थ, सबल, सक्रिय बनाने से भी अधिक से अधिक महत्वपूर्ण है। अतएव इन सबके लिए आध्यात्मिक साधना की अनिवार्यता है। इसके लिए प्रशांत, एकांत, स्वच्छ, पवित्र, धार्मिक स्थल, वन, उपवन, गृह आदि में भगवान् की प्रार्थना, पूजा, आराधना के माध्यम से स्वयं को शांत, पवित्र, समताभावी, उदार, सहिष्णु, अहिंसक, सत्यप्रेमी, न्यायशील, परोपकारी, सेवाभावी बनाने की भावना भानी चाहिए। इन सब भावनाओं की वृद्धि के लिए आध्यात्मिक, नैतिक साहित्य महापुरुषों की जीवनी आदि का भी अध्ययन करना चाहिए।

(11) अतिथि सेवा–आध्यात्मिक साधना में रत साधु-संत से ज्ञानार्जन करना चाहिए, प्रवचन सुनना चाहिए। उनके लिए योग्य पद्धति से आहारदान, औषधदान, ज्ञानोपकरण दान, वसतिकादान करना चाहिए। घर में आए हुए अतिथि, गरीब, असहाय, विकलांग, रोगी, दुर्बल, वृद्ध आदि की भी यथायोग्य व्यवस्था भोजन औषधि देकर करना चाहिए। माता-पिता, दादा-दादी, रोगी, वृद्ध आदि का भी मान-सम्मान-प्रणाम आदि करके उनके भोजन आदि के बाद गृहपालित पशु-पक्षी को भी भोजन आदि देना चाहिए। इसके बाद भाई-बंधु-सपरिवार मिलकर भोजन करना चाहिए। इससे भाव पवित्र, प्रसन्न, संतोष, तृप्त होता है, पुण्य बंध होता है, रोग दूर होते है, स्वास्थ्य लाभ होता है। इसके साथ-साथ दूसरे लोग भी स्वस्थ, संतोष होते है, आशीर्वाद देते है, सहयोग-सम्मान देते हैं, प्रशंसा करते हैं, इन सब कारणों से प्रेम, सौहार्द्र, संगठन बनता है।

(12) योग्य भोजन पद्धति–प्रातःकालीन क्रिया से लेकर अतिथि सेवा के लिए जो शारीरिक श्रम हुआ उसके लिए जो ऊर्जा उपयोग/व्यय हुआ उसकी पूर्ति के लिए तथा शरीर को स्वस्थ, सबल, क्रियाशील बनाकर धर्म की साधना, कर्त्तव्य की

पालना के लिए भोजन-पानी की भी आवश्यकता होती है।

भोजन के पहले हाथ, पैर, मुँह धोकर कुल्ला करके स्वच्छ, पवित्र, शांत, प्रदूषण से रहित, सूर्य प्रकाश से युक्त, हवादार स्थान में पाटा, चटाई आदि आसन मे पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके सुखासन में पालथी मारकर बैठना चाहिए। लकड़ी, कोयला की ईंधन से स्वच्छ मिट्टी, पीतल आदि ढके हुए बर्तन में सही बना हुआ, न्याय से उपार्जित, शुद्ध शाकाहार को पीतल, काँसा आदि स्वच्छ बर्तन में उचित रीति से परोसा हुआ भोजन निम्न पद्धति से खाना चाहिए।

भोजन क्रम–भोजन ग्रहण के पहले पवित्र, शांत भाव से भगवान् का स्मरण करके मौन धारण करना चाहिए। पहले थोड़ा सा पानी या दूध या पेय पीना चाहिए। पहले ही अधिक पानी पीने से अग्निमांद्य होता है अतः कम पीना चाहिए। इसके बाद मधुर, गरिष्ठ-भारी, दूध-घी से निर्मित मिष्ठान्न (हलुआ, खीर, रसगुल्ला, जलेबी, गुलाब जामुन, लड्डू, पेड़ा, मावा, मालपूआ) खाना चाहिए। इसके साथ-साथ नमकीन अनुपान-स्वाद के लिए लेना चाहिए, मिष्ठान्न के मध्य-मध्य में अनुपान रूप से दूध लेना चाहिए। इसके बाद सूखा मेवा (बादाम, मुनक्का, काजू, किशमिश, अखरोट, तिलगुजा, खजूर, खारक, मूँगफली आदि) लेना चाहिए। इसके मध्य-मध्य में पानी नहीं लेना चाहिए। आवश्यकतानुसार भोजन के आदि, मध्य, अंत में लेने वाली औषधि भी अनुपान के साथ लेना चाहिए। इसके बाद रोटी, पराठा, पुड़ी आदि को दाल, हरी सब्जी आदि के साथ लेना चाहिए। इसके मध्य-मध्य में थोड़ा-थोड़ा पानी धीरे-धीरे पीना चाहिए। हर ग्रास को दाँत की संख्या 32 प्रमाण से चबाना चाहिए जिससे ठोस भोजन भी पीसकर लार के मिश्रण से तरल जैसे बन जाए। संक्षिप्त में कहे तो पानी को खाना चाहिए और ठोस भोजन को पीना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि पानी को धीरे-धीरे चबा-चबा कर पीना चाहिए और ठोस भोजन को इतना चबाना चाहिए कि पानी जैसे पीने योग्य बन जाए। मध्य-मध्य में स्वाद परिवर्तन के लिए एवं अनुपान के लिए नमकीन, पापड़, पकौड़ी, समोसा आदि लेना चाहिए। अंत में घी, मीठा आदि से रहित सादा, हल्का भात, दलिया, खिचड़ी के साथ दाल-सब्जी आदि लेना चाहिए।

फल क्रम–वैसे तो फल आदि को अलग से ही लेना चाहिए तथा एक बार में एक ही प्रकार के फल लेना चाहिए परन्तु एक साथ अनेक प्रकार के फल लेना है तो पहले मीठा तथा गरिष्ठ फल यथा आम, केला फिर सेव, अँगूर, चीकू, पपीता आदि

फिर नारंगी, संतरा, नासपाती, अनानास आदि तथा अंत में ककड़ी आदि। मीठा आम को घी, दूध के साथ, केला को दूध और इलायची के साथ लेना चाहिए। कच्चा नारियल की गरी खाकर उसका पानी पीना चाहिए। किसी भी प्रकार के फल या फल रस के साथ या आगे-पीछे पानी नहीं पीना चाहिए क्योंकि इससे गला खराब हो जाता है, खाँसी-जुकाम हो जाता है। जिस व्यक्ति को भोजन के साथ-साथ भी फल, फलरस लेना है तो उसे भोजन के प्रथम भाग में मीठा आम, केला तथा भोजन के मध्य में सेव, अँगूर आदि तथा भोजन के अंत में ककड़ी लेना चाहिए।

अनुपान एवं विरुद्ध आहार–दूध के साथ मीठी अनुपान है तो खट्टी चीज, नमक, हरी पत्ती की चटनी, सब्जी आदि विरुद्ध आहार है। फल के आगे-पीछे पानी विरुद्ध आहार है। गरम भोजन-पानी के आगे-पीछे ठंडा भोजन-पानी विरुद्ध आहार है। एक प्रकार की तरल वस्तु के बाद फिर अन्य प्रकार की तरल वस्तु लेना अयोग्य है। यथा पानी के बाद नारियल का पानी या ठंडाई अथवा अन्य रस आदि। एक बार कोई तरल वस्तु लेने के बाद रोटी आदि लेकर फिर अन्य तरल वस्तु लेना चाहिए। नहीं तो पेट का एक भाग फूल जाएगा, भोजन सही नहीं होगा तथा सही नहीं पचेगा। भोजन के अंत में मीठी सौंफ, इलायची आदि मुखशुद्धिकारक लेना चाहिए और पानी आदि पेय पीना चाहिए।

भोजन के बाद की क्रिया–भोजन के बाद बेसन से हाथ धोकर अच्छी तरह से 6-7 बार कुल्ला करना चाहिए और दाँत में फँसे हुए भोजन के अंश को दाँत साफ करने वाली नीम आदि की शली (तिली) से सही रूप से साफ करना चाहिए। नहीं तो भोजन के अंश सड़ने से अनेक प्रकार के सूक्ष्म जीवाणु-रोगाणु लाखों करोड़ों की संख्या में उत्पन्न होते है जिससे मुख से भयंकर बदबू आती है, दाँत पीले पड़ जाते है, दाँत के ऊपर पपड़ी पड़ जाती है, कीड़े उत्पन्न होते है, पायरिया-दंतक्षय आदि रोग होते हैं, पीव, दूषित खून निकलता है। यह सब भोजन, पानी के साथ पेट में जाकर विभिन्न रोग उत्पन्न करते है। इन सब कारणों से मुख की सुंदरता कम होती है, दूसरे लोग (बदबू के कारण) पास में रहना, बातें करना पसंद नहीं करते है। दाँतों को साफ, मजबूत करने के लिए, मुखरोग से बचने के लिए, मुख को सुगंधित करने के लिए शुद्ध दंत मंजन या हल्दी+सेंधा नमक+लौंग चूर्ण अथवा मीठी सौंफ+इलायची आदि का भी प्रयोग करके सही रूप से दाँतों को साफ करके 6-7 बार कुल्ला करना चाहिए। दोनों हथेलियों को रगड़कर दोनों आँख तथा चेहरा पर हथेलियों को फेरना

चाहिए। इससे दृष्टि दोष दूर होते हैं, चेहरे में फुंसी नहीं होती है, चेहरा चमकता है।

भोजन की सामग्री–मानव प्राकृतिक रूप से शाकाहारी, उन्नत, आध्यात्मिक प्राणी होने से उसका भोजन, पेय की सामग्री भी उसके अनुसार होना स्वाभाविक है। अतः मनुष्य शुद्ध, जीवों से रहित-प्रासुक, मर्यादित-ताजा, पौष्टिक, सात्विक, सरस, सुगंधित, प्रिय, प्राकृतिक अनाज, दाल, फल, सब्जी, मेवा, दूध, घी, फलरस, हरी पत्ती, पानी, ठंडाई, शरबत आदि का सेवन करना चाहिए। रोगकारक, बुद्धि को कम करने योग्य खट्टी चीज (आँवला, नींबू को छोड़कर) लाल मिर्च, बेसन, उड़द, मक्का, तेल, ग्वार की फली, टिंडूरी, कद्दू, खसारी दाल आदि सेवन नहीं करना चाहिए या कम से कम सेवन करना चाहिए। बाजार की बनी हुई किसी भी प्रकार की चीज नहीं खाना चाहिए। नमक, चीनी कम से कम प्रयोग करना चाहिए। महीन पीसा हुआ आटा, मैदा, मसाला प्रयोग नहीं करना चाहिए। भारतीय प्राचीन पद्धति से बनी हुई भोजन सामग्री सुस्वादु, पौष्टिक, स्वास्थ्यप्रद, गुणकारी, सुगंधित, देखने में सुंदर, आयुर्वेदिक-वैज्ञानिक, भारतीय भूगोल-जलवायु-संस्कृति के अनुकूल होने से भारतीय देशी-घर में बने हुए भोजन, पेय ही योग्य है। माँस, मछली, अण्डा, शराब, बिड़ी, सिगरेट, तम्बाखू, तम्बाखू से बनी हुई हर चीज, गुटखा, गांजा, भांग, चरस आदि, कोकाकोला आदि बाजारू शीतल पेय आदि हिंसाकारक, रोगकारक पर्यावरण प्रदूषक, अर्थ व्ययकारी, दुर्घटनाकारक, बुद्धिनाशक होने से कभी भी सेवन योग्य नहीं है।

भोजन के बाद भगवान् का स्मरण करके उठना चाहिए और 100 कदम धीरे-धीरे चलना चाहिए। फिर मूत्र त्याग करना चाहिए। थोड़ा विश्राम के लिए एवं भोजन सही पचने के लिए शवासन में 1-2 मिनट, दाएँ करवट 2-3 मिनट एवं बाएँ करवट में 4-5 मिनट विश्राम करना चाहिए।

(13) शरीर के शेष कुछ अवयवों की सफाई–हाथों की अंगुलियों के नाखूनों की कटाई एवं सफाई अति आवश्यक है, नहीं तो नाखूनों में गंदगी जमी रहती है और उनमें अनेक प्रकार के जीवाणु लाखों-करोड़ों में होते हैं। हथेलियों में भी करोड़ों के जीवाणु होते हैं। इसलिए भी इसे भी हर काम के आगे-पीछे राख, बेसन, साफ मिट्टी, अहिंसक साबुन आदि से साफ करते रहना चाहिए। विशेष करके भोजन के पहले एवं बाद में तो अवश्य अच्छी तरह से साफ करना चाहिए। नाखून न बड़ा रखना चाहिए न ही नेलपॉलिश, लिपिस्टिक आदि लगाना चाहिए। नहीं तो भोजन के समय करोड़ों जीवाणु, गंदगी, नेलपॉलिश में मिलाए गए पशु-पक्षी के खून, हानिकारक

रसायन पेट में जाने से हिंसा होती है, माँस खाने का दोष लगकर विभिन्न रोग होते हैं। पैर की अंगुलियों के भी नाखून की कटाई-सफाई करते रहना चाहिए तथा पैरों को साफ रखना चाहिए। बाहर से आने के बाद पहले जूते, मोजा निकालकर पैर, हाथ, मुख धोकर, वस्त्र बदलकर घर में प्रवेश करना चाहिए। संभव हो तो स्नान करना चाहिए। सूर्य अस्त के समय कान में तिल्ली आदि के तैल डालना चाहिए और सुबह रूई को शिली में लपेटकर उससे धीरे से कान साफ करना चाहिए जिससे कान में रोग नहीं होते हैं, बहरापन नहीं आता है।

वस्त्र, घर, घर के परिसर, बर्तन आदि की सफाई-वस्त्रादि की सफाई के लिए भी छना हुआ साफ पानी का ही प्रयोग करना चाहिए। सफाई करने की साबुन, सर्फ, सोड़ा आदि भी अहिंसक एवं हानिकारक रसायन आदि से रहित होना चाहिए। सफाई से वस्तु आदि साफ, सुंदर, चमकदार, जीवाणु-रोगाणु-सूक्ष्म जीव-जंतु, मच्छर, मक्खी, खटमल से रहित, अधिक समय टिकाऊ वाली होती है और स्वास्थ्य अच्छा रहता है, रोग नहीं होते हैं, बदबू नहीं फैलती है, पर्यावरण स्वच्छ रहता है तथा अस्वस्थता से इन सबके विपरीत प्रभाव पड़ता है। ऐसा ही घर, घर के परिसर, बर्तन, प्रयोग में आने वाले हर उपकरण, आँगन, घर के पास के रास्ता-रोड, कुँआ, तालाब, नदी, नाला, बगीचा आदि की भी यथायोग्य सफाई होनी चाहिए। क्योंकि इन सबका भी प्रभाव स्वयं के ऊपर, परिवार के ऊपर, समाज आदि पर पड़ता है।

II-दोपहर (मध्याह्न) की क्रियाएँ

(14) विद्यार्जन, जीविका उपार्जन-यदि विद्यार्थी हो तो विद्यार्जन के लिए, शिक्षक हो तो विद्या प्रदान के लिए, व्यापारी को व्यापार, कृषक को कृषि, सेवा क्षेत्र के सेवा के लिए जाना चाहिए। अपने कार्यों को समय पर, ईमानदारी से, अनुशासन, शालीनता, कर्त्तव्यनिष्ठा से सत्य-अहिंसा-अचौर्य-निर्लोभता-शील-संयम से युक्त होकर करना चाहिए। इससे अपना-अपना कार्य अच्छा होता है, मन को शांति मिलती है, प्रगति-समृद्धि होती है, दूसरों को भी लाभ पहुँचता है, देश का विकास होता है।

(15) यातायात के नियम-यातायात के नियम स्वैच्छा से पालन करना चाहिए। कम दूरी (कुछ किलोमीटर) होने पर पैदल ही आना-जाना चाहिए। इससे स्वास्थ्य अच्छा रहता है, दुर्घटना-हिंसा-प्रदूषण-धन व्यय नहीं होता है या कम से कम होता है। दूरी कुछ ज्यादा (6-7 किमी. से ज्यादा) होने पर साईकिल का विकल्प

चुन सकते है। इससे पैदल चलने के लाभ कुछ कम होते है परन्तु अन्य यान-वाहन से होने वाली हानियों से कम हानि होती है। अन्य यान-वाहनों से तो अत्यधिक दुर्घटना, हिंसा, धन व्यय, प्रदूषण आदि होते हैं। यातायात में भी अनुशासन, संयम, धैर्य, नियम, शालीनता, अहिंसा, परोपकार, मर्यादा आदि का पालन करना चाहिए। मद्यपान, धूम्रपान, तम्बाखू आदि सेवन करके या करते हुए जाना-आना नहीं करना चाहिए। रास्ते में गंदगी नहीं फैलाना चाहिए, शोर-शराबा, अश्लील कार्य, गुण्डागर्दी, हड़ताल, तोड़-फोड़, आगजनी आदि नहीं करना चाहिए। इससे स्वयं की, दूसरों की, राष्ट्र की हानि होती है, स्वयं के साथ-साथ राष्ट्र का नाम बदनाम होता है।

(16) सार्वजनिक कार्यक्रम के नियम–मानव एक सामाजिक, धार्मिक, गुणग्राहक प्राणी होने से वह विभिन्न प्रकार से सार्वजनिक कार्यक्रमों का आयोजन करता है तथा आयोजनों में भी भाग लेता है। ऐसे कार्यक्रमों में विभिन्न प्रकार के अधिक लोग भाग लेने के कारण वहाँ अधिक अनुशासन, समय के अनुसार कार्यक्रम, संयम, धैर्य, शालीनता, मौन, मान-मर्यादा आदि की आवश्यकता होती है। वहाँ पर बच्चों, वृद्ध, रोगी, विकलांग, दुर्बल, महिला, गुरुजन, गुणीजनों की सुविधा व्यवस्था पहले से अच्छी तरह से होना चाहिए। वहाँ पर धूम्रपान, नशीली वस्तुओं का सेवन, अव्यवस्था, अनुशासनहीनता, शोरगुल, गंदगी फैलाना, प्रदूषण करना आदि का पूर्णतः कड़ाई से निषेध होना चाहिए। यह सब नियम सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक (विधानसभा, राज्यसभा, संसद में भी) शैक्षणिक, व्यापारिक, कला-सांस्कृतिक, कानूनी, मृत्यु, विवाह, मेला, त्यौहार, जुलूस, नृत्य, नाटक आदि सब में होना चाहिए। किसी भी सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि-पद-उपाधि वालों को भी छूट नहीं होना चाहिए।

(17) संध्या पूर्व के कार्यक्रम–सूर्य अस्त के पहले द्वितीय बार भोजन पूर्ण हो जाना चाहिए। क्योंकि रात को सोने के 2-3 घंटे पहले भोजन करने से भोजन सही पचता है, पेट में गैस नहीं बनती है, स्वास्थ्य सही रहता है, नींद अच्छी आती है, दिन में सूर्य किरण के कारण कीट-पतंग का संचार कम होता है, विटामिन डी बनता है किन्तु सूर्य किरण के अभाव से कीट-पतंगों का संचार अधिक होने से (बिजली के प्रकाश से तो रात को और अधिक कीट-पतंग आकर्षित होकर भोजन में भी गिरते हैं) उनका भोजन के माध्यम से पेट में जाना स्वाभाविक है जिससे हिंसा होती है, माँस भक्षण का दोष लगता है, विभिन्न रोग भी होते हैं।

भोजन के बाद स्वच्छ, शांत, प्रदूषण रहित, प्राकृतिक वातावरण में भ्रमण

(टहलने) के लिए जाना चाहिए। ज्यादा व्यायाम, शारीरिक परिश्रम आदि नहीं करना चाहिए। परिवारजन, मित्रों से मिलकर सुख-दुःखों के बारे में पूछना चाहिए और उसमें सहभागी बनना चाहिए। बच्चों के साथ मनोरंजन भी करना चाहिए। बच्चों को स्कूल-कॉलेज की पढ़ाई के साथ-साथ धार्मिक, नैतिक, सेवा, परोपकार, राष्ट्रभक्ति, पशु-पक्षी से प्रेम, पर्यावरण की सुरक्षा, रोगी-असहाय-विकलांग-वृक्ष आदि की सेवा तथा सहयोग, गुरुजन, गुणीजन की भक्ति-सेवा-व्यवस्था आदि की शिक्षा देकर प्रेरित करना चाहिए तथा स्वयं भी इन महान् कार्यों को करते हुए आदर्श की स्थापना करते हुए उनसे भी करवाना चाहिए। इससे बच्चे ज्ञानी, गुणी, महान्, सुखी, प्रसन्न, उन्नत बनते है।

(18) संध्याकालीन कार्यक्रम-संध्या (शाम) को भोजन, अध्ययन (पढ़ाई), शयन आदि नहीं करना चाहिए। इस समय भजन, कीर्तन, आरती, जप, ध्यान, सांस्कृतिक कार्यक्रम, स्वस्थ-शालीन मनोरंजन, कथा-वाचन-श्रवण आदि करना चाहिए तथा दूसरों को भी प्रेरित करना चाहिए। इससे मन प्रसन्न होता है, थकान दूर होती है, धार्मिक-सांस्कृतिक-सामाजिक जागृति होती है, मेल-मिलाप बढ़ने से प्रेम-संगठन बढ़ता है, अश्लील-हिंसात्मक-हुल्लड़ टी.वी., सिनेमा, नाटक, क्लब, मनोरंजन के कार्यक्रम में लोग कम भाग लेते हैं-आकर्षण घटता है; अच्छे काम में भाग लेने वाले उस समय में गलत काम से दूर रहते हैं। इससे भारतीय प्राचीन कला-संस्कृति जीवित रहती है, उसका प्रचार-प्रसार होता है।

III-रात्रिकालीन चर्या

(19) रात्रि के प्रथम प्रहर के कार्यक्रम-रात्रि के प्रथम प्रहर में स्कूल-कॉलेज में पढ़ाये विषयों को दोहराना तथा गृहकार्य करने के साथ-साथ धार्मिक-नैतिक आदि साहित्यों का अध्ययन, धार्मिक प्रवचन-प्रश्नमंच-शास्त्र स्वाध्याय-तात्त्विक चर्चा सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि में भाग लेना, साधु-संत-गुरुजन-माता-वृद्धजनों के तेल आदि मालिस के द्वारा सेवा-वैयावृत्ति करना, सामाजिक-धार्मिक-मीटिंग (बैठक)-सम्मेलन-सभा आदि में भाग लेना करना चाहिए। अनावश्यक रूप से रात को इधर-उधर घूमना नहीं चाहिए। गंदे अश्लील-हिंसात्मक सिनेमा, टी.वी., थियेटर मनोरंजन के कार्यक्रम आदि नहीं देखना चाहिए, क्लब आदि में नहीं जाना चाहिए। वेश्यागमन, परस्त्री गमन, जुआ, शिकार, मद्यपान, मांस भक्षण, नशीली वस्तुओं का सेवन, चोरी, अनैतिक कार्य, लड़ाई-झगड़ा, गप्पे लगाना आदि कुछ लोग विशेषतः रात को करते हैं

जो सर्वथा अयोग्य है, निंदनीय है, असामाजिक है, अनैतिक है, अकरणीय है, पापात्मक है।

(20) रात्रि के द्वितीय प्रहर के कार्य-सोना-सोने के पहले ढीले एवं कम वस्त्र पहनना चाहिए तथा हाथ, पैर, मुँह धोकर, कुल्ला करके (संभव हो तो स्नान करके) बिस्तर को साफ करके साफ जगह में बिछाना चाहिए। मच्छर हो तो मच्छरदानी का प्रयोग करना चाहिए। पूर्व में वर्णित सोने की पद्धति के अनुसार गहरी-सुख निद्रा लेकर प्रातःकाल (ब्रह्म मुहूर्त में) जागकर अपनी आदर्श दैनिक चर्या पुनः प्रारंभ करनी चाहिए। ऐसी दिनचर्या से शरीर-इन्द्रियाँ-मन-आत्मा-स्वस्थ, सबल-सक्रिय रहते हैं, हर कार्य सुचारू रूप से होते हैं, जीवन आदर्श-उन्नत-शांतिमय-प्रगतिशील बनता है।

व्यवस्थित दैनिक चर्या से लाभ-व्यवस्थित, संतुलित, अनुशासित, क्रमबद्ध, समयानुकूल, प्राथमिकता के अनुसार संतुलित, समतापूर्ण, तनाव रहित, एकाग्रता से ध्यानपूर्वक, रूचि सहित उत्तम कार्य करने से कार्य सही होता है, प्रसन्नता होती है, संतुष्टि-तृप्ति का अनुभव होता है, गौरव अनुभव होता है, दूसरे लोग प्रशंसा करते है जिससे थकान, खेद, पश्चाताप, खिन्नता के अभाव के साथ-साथ समय-श्रम-साधन-धन आदि की भी हानि नहीं होती है। इससे विपरीत अव्यवस्थित आदि से सहित असंतुलित आदि से युक्त होकर काम करने से काम सही नहीं होता है, प्रसन्नता आदि नहीं होती है जिससे थकान आदि अनुभव होती है तथा समय आदि का दुरुपयोग होता है। इसलिए व्यवस्थित आदि विशेषताओं से युक्त होकर अधिक भी कठिन काम प्रचुर मात्रा में करने वाले महापुरुष जल्दी थकते नहीं है। क्योंकि उनकी ऊर्जा का अपव्यय व्यवस्थित आदि विशेषताओं के कारण नहीं होता है। जिस प्रकार की लक्ष्यहीन गति केवल भटकाव है उसी प्रकार अव्यवस्थित दैनिक चर्या भी समय-अभाव, थकान, असफलता, रोग, चिन्ता, खीज आदि समस्या की जननी है। अनेक व्यक्ति ''काम कौड़ी का नहीं और फुर्सत मिनट की नहीं'' को चरितार्थ करते है। महान् कार्य करने के लिए किसी महापुरुष ने कहा भी है-शुरू में वह कीजिए जो आवश्यक है, फिर वह जो संभव है और अचानक आप पायेंगे कि आप तो वह कर रहे है जो असंभव की श्रेणी में आता है।

परिच्छेद-IV
द्वितीय-कक्षा
आदर्श जीवन चर्या

देश-विदेशों के धर्म, दर्शन, डार्विन के विकासवाद, आधुनिक जीव विज्ञान-प्राणी विज्ञान, जैन जीव विज्ञान-कर्म सिद्धांत-गुणस्थान (जैन आध्यात्मिक क्रम विकास सिद्धांत), पुराण, विश्व इतिहास आदि से ज्ञान होता है कि मानव जीवन, विश्व में सर्वश्रेष्ठ जीवन है। इन सब विशेषताओं से युक्त मानव जीवन होते हुए भी मानव जीवन केवल दुर्लभता से ही प्राप्त नहीं होता है परन्तु मानव जीवन का सदुपयोग दुर्लभ ही मानव कर पाते हैं। क्योंकि दुर्लभ ही मानव आदर्श जीवन चर्या को जानते हैं, मानते हैं, अपनाते हैं। इसलिए दुर्लभ मानव जीवन प्राप्त करके भी अधिकांश मानव दुर्दशामय जीवन जीकर दुर्गति को प्राप्त करते हैं। अतएव मैं (आ. कनकनन्दी) देश-विदेशों के प्राचीन एवं आधुनिक ज्ञान-विज्ञान-आध्यात्मिक ग्रंथों के साथ-साथ मेरे अनुभूत कुछ आदर्श जीवन चर्या का दिग्दर्शन निम्न में कर रहा हूँ। सविस्तार परिज्ञान के लिए मेरी (1) संस्कार (2) मानव इतिहास एवं मानव विज्ञान (3) तत्त्वानुचिन्तन (4) सूक्ष्मजीव विज्ञान से शुद्ध जीव विज्ञान आदि कृतियों का अध्ययन करें। मैं यहाँ संक्षिप्ततः मानव जीवन को (1) शिशु जीवन चर्या (2) विद्यार्थी जीवन चर्या (3) गृहस्थ जीवन चर्या (4) सामाजिक जीवन चर्या (5) राष्ट्रीय जीवन चर्या (6) वैश्विक जीवन चर्या (7) आध्यात्मिक जीवन चर्या रूप में विभक्त करके उस संबंधी प्रकाश डाल रहा हूँ।

I-शिशु जीवन चर्या

(1) गर्भस्थ शिशु की जीवन चर्या-जिस प्रकार की योग्य बीज, अनुकूल जलवायु, मृदा, सूर्य किरण, समय आदि के सहयोगी निमित्तों को प्राप्त करके अंकुर से क्रम विकास करता हुआ वृक्ष-फल-फूल-बीज रूप से परिणमन करता है उसी प्रकार मानव जीवन भी पूर्वार्जित कर्मों को लेकर माता के गर्भ में आकर गर्भस्थ शिशु अवस्था से लेकर 6-7 वर्ष की शिशु अवस्था तक प्रायः मानव जीवन असहाय/दुर्बल/परावलंबी होने से माता-पिता-परिवारजनों का कर्त्तव्य होता है कि उसका लालन-पालन-संरक्षण-संवर्द्धन-संस्कार-निर्वहण सही रूप से करें। गर्भाधान क्रिया से पूर्व ही माता-पिता-परिवारजनों को शिशु के योग्य सुसंस्कार, वातावरण बनावे

जैसा कि कृषक खेती में बीज बोने के पहिले से ही खेत को योग्य बनाता है। वे स्वयं सुसंस्कारित, सदाचारी, आदर्श बनें। केवल कामावेश के कारण शिशु का जन्म न होकर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के आदर्श से शिशु का जन्म तथा लालन-पालन आदि हो। एतदर्थ माता-पिता को भाव-व्यवहार में गर्भाधान क्रिया के पूर्व ही यथायोग्य चारों पुरुषार्थ को अपनाना चाहिए। उनके भाव-व्यवहार में शालीन, शांत, समता, समन्वय, प्रेम, सौहार्द्र, धैर्य, क्षमा, सहिष्णुता, धार्मिक, आध्यात्मिक आदि गुण होना चाहिए तथा वातावरण भी शांत, सवच्छ, प्रदूषण रहित, मंगलमय गाना-संगीत-भजन से युक्त होना चाहिए। यह सब शिशु रूपी बीज के लिए योग्य खाद, पानी आदि के समान है। इन सबका प्रभाव गर्भस्थ शिशु के ऊपर भी पड़ता है। इसके साथ-साथ माता-पिता मद्य, माँस, नशीली वस्तु आदि का सेवन भी कदापि न करें। विशेषतः माता सुस्वादु, पौष्टिक, मधुर, स्निग्ध, सुगंधित प्रिय भोजन करे तथा चटपटा-मसालेदार, नमकीन खट्टी आदि वस्तुओं का सेवन न करे और श्रृंगार, विकथा, तनाव, क्रोध, ईर्ष्या, क्रूरता, हिंसा, भय, चिन्ता, संक्लेश, अतिश्रम, अतिजागरण, खोटाभाव, अश्लील, कुशील भाव-व्यवहार-वर्तन-कथन न करे, इस प्रकार के टी.वी. प्रोग्राम, सिनेमा, नाटक आदि न देखें।

छोटे शिशु–जन्म के बाद छोटे शिशु की स्वच्छता सही करें। प्रसूति गृह, शिशु पालन गृह भी स्वच्छ, शांत, प्रदूषणों से रहित, प्रकाश युक्त, हवादार हो। शिशु का बिस्तर, वस्त्र आदि भी स्वच्छ, हल्का हो। शिशु को अधिक पोषाक न पहनावे, न ही मोटा पोषाक पहनावे। प्राचीन शास्त्रों में वर्णन नहीं पाया जाता कि श्रीराम, कृष्ण आदि बाल्यकाल से ही पूरे शरीर को ढ़कने वाले पोषाक नहीं पहने थे जैसा कि अभी के शिशु जीन्स के सूट, पैंट, कोट, टाई, मोजा, जूता पहनते हैं। अधिक पोषाक पहनने से शिशु को सूर्य किरण, वायु पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलता है जिससे शिशु के शरीर में विटामिन 'डी' नहीं बनता है, हड्डी मजबूत नहीं बनती है, रोग प्रतिरोधक शक्ति कम होती है, शरीर मजबूत नहीं होता है, शरीर की वृद्धि में बाधा पहुँचती है। शिशु को शीत ऋतु में प्रातःकालीन कोमल सूर्य किरण में नंगा शरीर में तेल, हल्दी लगाकर नंगा सुलाने से, खेलाने से शरीर में विटामिन 'डी' बनता है, हड्डी मजबूत होती है, रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है, शरीर मजबूत होता है। शिशु को झूला झुलाते समय, गोद में लेकर प्यार करते समय, कोमलता से स्पर्श करते समय, माता के दूध पिलाते समय, खिलाते समय, सुलाते समय लोरियाँ, धार्मिक, नैतिक, भजन, महापुरुषों की जीवनी

संबंधित गीत (गान) सुनाना चाहिए, णमोकार मंत्र, भगवान् के नाम आदि सुनाना चाहिए तथा थोड़ा बड़े शिशु को णमोकार मंत्र आदि सिखाना चाहिए न कि सिनेमा के अश्लील गाने उसके सामने गाना चाहिए, न ही ऐसा टी.वी. प्रोग्राम आदि दिखाना चाहिए। इसके साथ-साथ उसे बिना अक्षर (अ, आ, A, B, C) सिखाये मातृभाषा में माता, पिता, दादा, दादी, काका, काकी, भैया आदि संबोधन वाचक शब्द सिखाते हुए उनका परिचय कराके उनका विनय कैसे किया जाता है सिखाना चाहिए न कि A, B, C अक्षर, A फॉर Ass, ग फॉर गधा, मम्मी-मम, डेडी, अंकल, आंटी, टाटा, हाय, हैलो, बॉय, Good Night आदि सिखाना चाहिए। क्योंकि शिशु गर्भ से ही मातृभाषा सुनते रहने के कारण मातृभाषा जल्दी सीख जाता है। मातृभाषा सीख जाने से वह अन्य भाषा, विषय भी शीघ्र सीख सकता है। जब मातृभाषा ही नहीं आती है तो अनजान विदेशी गुलाम की भाषा कैसे जल्दी सीख सकता है?

थोड़े बड़े शिशु-इन्हें भी बिना अक्षर ज्ञान सिखाने, मातृभाषा के छोटे-छोटे वाक्यों से बड़ों का सम्मान सहित संबोधन करना, उनके पैर छूकर प्रणाम करना, उनसे छोटे बच्चों को प्यार करना, बच्चों के साथ प्यार से खेलना, मंदिर जाना, प्राकृतिक स्थल में जाना, साधु-संत-गुरुजन के पास जाकर उन्हें विनय से नमोऽस्तु करना, धार्मिक कार्यक्रम में भाग लेना, पशु-पक्षी से प्यार करना-उनकी आवाज की नकल करना आदि सीखना चाहिए। इससे शिशु का शारीरिक, मानसिक, भाषा संबंधी, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि विकास होता है, संस्कार पड़ता है। यह सब जीवन रूपी विशाल महल की नींव है, आधारशिला है।

शिशु को कृत्रिम दूध, बोतल या पाउडर का दूध नहीं देकर संपूर्ण भोजन स्वरूप, औषधमय, प्रेम-वात्सल्यपूर्ण माता का ही दूध पिलाना चाहिए। यदि यह संभव नहीं तो बकरी या गाय का दूध देना चाहिए। विषाक्त रसायन से युक्त खिलौने न देकर वस्त्र, लकड़ी, रबड़ के अहानिकारक खिलौने देने चाहिए। शिशु को 21-22 घंटे सोना चाहिए। बच्चों को खेलते हुए, हँसते हुए, बोलते हुए, नटखटी करते हुए, सोते हुए नहीं रोकना चाहिए। वे इसके माध्यम से सीखते है, विकास करते है। वे किसी भी चीज को तोड़-फोड़-बिखराव नहीं करते हैं। वे तो इसके माध्यम से सीखते हैं, खेलते हैं, मनोरंजन करते हैं। ऐसी परिस्थिति में मूल्यवान, नाजुक, भंगुर, हानिकारक चीजों को बच्चों की पहुँच से दूर रखना चाहिए। बच्चों को साफ, सुरक्षित मिट्टी, रेत, जमीन, पानी आदि से खेलने देना चाहिए जिससे उनका मनोरंजन,

ज्ञानार्जन, स्वास्थ्य लाभ के साथ-साथ उनकी रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है। गर्भस्थ शिशु बीज है तो थोड़े बड़े अंकुर है तथा विद्याध्ययन करने योग्य शिशु पौधा है। जिस प्रकार की बीजों को कृषि नर्सरी में पौधा तक बनाकर फिर वहाँ से ले जाकर योग्य स्थान में रोपण कर वृक्ष बनाकर फलादि प्राप्त करते है वैसा ही गृह-परिवार रूपी नर्सरी में शिशु रूपी अंकुर जब विद्यार्थी रूपी पौधा बन जाता है तब जाकर विद्यालय रूपी स्थान में रोपण करने पर आदर्श जीवन रूपी फल प्राप्त होता है अन्यथा अंकुर रूपी शिशु को घर परिवार रूपी नर्सरी से निर्ममता से उखाड़कर बंजर भूमि रूपी स्कूल में डाल देने पर आदर्श जीवन रूपी फल तो मिलना दूर किन्तु शिशुरूपी अंकुर ही पौधा बनने के पहले मुरझाकर सुख न जाये इसका ध्यान भारतीय रूपी कृषक रखने में अयोग्य है।

II-विद्यार्थी जीवन चर्या

6-7 वर्ष के शिशु को योग्य विद्यालय में योग्य विद्वान्, दयालु, परोपकारी, कर्त्तव्यनिष्ठ, सदाचारी गुरु के पास भेजना चाहिए। पौधों को जब अन्य स्थान में रोपण किया जाता है तब उसका जिस प्रकार अच्छी तरह से सार-संभाल किया जाता है उसी प्रकार विद्यार्थी जीवन का भी होना चाहिए तब जाकर आदर्श जीवन रूपी खेत में सुख-शांति रूपी फल प्राप्त होगा। विद्यार्थी को केवल आक्षरिक, पुस्तकीय, रटन्त, कागज डिग्री प्राप्त शिक्षा ही प्राप्त नही होना चाहिए इससे भी आगे आदर्श दैनिक चर्या-जीवन चर्या, नैतिक, वैज्ञानिक, आध्यात्मिक, गणितीय, वैश्विक, पर्यावरण सुरक्षात्मक सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक शिक्षा भी प्राप्त होनी चाहिए जिससे उनके सर्वोदय के माध्यम से सातों (7) प्रकार की जीवन चर्या का निर्वहण हो। शिक्षा तनावयुक्त, बोझरूप, फैशन-व्यसन के उत्पादक, अहंकार कारक, परिवार-समाजघाती से लेकर आत्मघाती न होकर आनंददायी, बोधप्रद, शोधपरक, सर्वांगीण विकास के लिए प्रेरक कारक बने जिससे स्व-पर-विश्व कल्याण हो।

III-गृहस्थ जीवन चर्या

गृहस्थ जीवन अर्थात् पारिवारिक जीवन/वैवाहिक जीवन के बाद ही समाज का निर्माण हुआ अतः सामाजिक जीवन की प्राथमिक ईकाई गृहस्थ जीवन है। यदि सर्वसंन्यास रूप पूर्ण ब्रह्मचर्य से आध्यात्मिक जीवन चर्या पालन के लिए कोई असमर्थ होता है तो वह आंशिक ब्रह्मचर्य पूर्वक धार्मिक पद्धति से विवाह करके गृहस्थ जीवन चर्या में प्रवेश करता है। स्व-धर्मपत्नी तथा स्वपति को छोड़कर अन्य

समस्त स्त्री-पुरुष-नपुंसक-बालक-बालिका आदि से यौन संबंध नहीं करना तथा स्वपति-पत्नी में ही नैतिक मर्यादित यौन संबंध में संतोष रहने को ब्रह्मचर्य अणुव्रत/आंशिक ब्रह्मचर्य कहते है। इस दृष्टि से समलैंगिकता, Live in relation ship, विवाहेतर समस्त संबंध अयोग्य है, अनैतिक है, संस्कृति के विपरीत है। अपरिपक्व अवस्था में विवाह (बाल विवाह) भी उपरोक्त दुर्गुणों के साथ-साथ अस्वास्थ्यकर तथा अयोग्य-दुर्बल-रोगी संतान के लिए कारण है। ''यति जनयितुम्'' अर्थात् यति-साधु, धार्मिक परंपरा को आगे बढ़ाने योग्य संतान की उत्पत्ति के लिए पारिवारिक/वैवाहिक जीवन चर्या में प्रवेश होता है। केवल घर में रहना, धन कमाना, भोग भोगना आदि यथार्थ से गृहस्थाश्रम/पारिवारिक जीवन नहीं है अपितु अविरुद्ध रूप से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की यथायोग्य साधना करना ही यथार्थ से गृहस्थाश्रम है। गृहस्थ+आ+श्रम अर्थात् घर में रहकर यथायोग्य चारों पुरुषार्थों के लिए समग्र प्रकार से श्रम करना/पुरुषार्थ करना ही गृहस्थाश्रम है। इसलिए गृहस्थों को न्याय नीति से धनार्जन करके, मोक्ष का लक्ष्य बनाकर (रखकर), संतानों का लालन-पालन के साथ-साथ संस्कारित करते हुए, माता-पिता-गुरुजन-गुणीजन की सेवा व्यवस्था करते हुए, रोगी, वृद्ध, असहाय, विकलांग आदि की दया से सहयोग करते हुए, पशु-पक्षी पर्यावरण की सुरक्षा करते हुए जीवन चर्या का निर्वहण करना चाहिए।

गृहस्थ जब तक गृह त्यागकर-संन्यासी बनकर साधु नहीं बन जाता है तब तक उपर्युक्त कर्त्तव्यों को पालन करना चाहिए। बड़ा होकर विवाह के बाद जो माता-पिता-वृद्धजन-रोगी आदि की सेवा व्यवस्था नहीं करते हैं, उन्हें अलग कर देते हैं, वृद्धाश्रम में भेज देते हैं, उपेक्षा कर देते हैं, औषधि आदि की व्यवस्था नहीं करते हैं, वे स्वयं के मूल तथा शाखा-फलादि को काटकर विकास करने के भ्रम में रहते हैं। मूल स्वरूप माता-पिता आदि तथा शाखा-फलादि स्वरूप संतान के बिना गृहस्थ जीवन रूपी वृक्ष कैसे जी सकता है, वृद्धि कर सकता है, फलप्रद हो सकता है। क्योंकि माता-पितादि से युक्त संयुक्त परिवार में संतान का लालन-पालन-संस्कार जिस प्रकार के उत्तम रूप से होता है वैसा विभक्त परिवार में नहीं हो पाता है। वर्तमान में भारत के विभक्त परिवार तथा उनके बच्चों की दुर्दशा इसके लिए प्रायोगिक ज्वलंत उदाहरण है।

IV-सामाजिक जीवन चर्या

गृहस्थ जीवन के बाद सामाजिक जीवन प्रारंभ होता है क्योंकि अनेक परिवार

के सम्यक् समन्वय, सहयोग रूपी विशाल समूह/ईकाई/संगठन ही समाज है। सामाजिक संगठन के बाद से ही मानव का विकास अधिक तीव्र गति से प्रारंभ हुआ; कला, शिक्षा, व्यापार, कृषि, सेवा, ज्ञान, विज्ञान से लेकर संस्कार, संस्कृति, सदाचार, मोक्षमार्ग, आध्यात्मिकता का भी शोध-बोध-प्रयोग-प्रचार-प्रसार-भी तब से हुआ, इस दृष्टि से भी मानव एक सामाजिक-आध्यात्मिक प्राणी है। इसलिए मानव को स्वस्थ-सुसंस्कारित सुसंस्कृत समाज में रहना चाहिए तथा स्वस्थ सुसंस्कारित आदि भी बनना चाहिए। अतएव मानव के विकास के योग्य समाज को होना चाहिए और समाज के विकास के योग्य मानव को होना चाहिए। डार्विन के संघर्षवाद के विपरीत सहयोगमय सामाजिक जीवन से मानव का विकास होता है तथा संघर्ष से विनाश होता है। विकास रुक जाता है। पूर्वाचार्यों ने भी कहा है-

परस्परोपग्रहो जीवानाम्। (21) त.सू.

परस्परोपग्रहो जीवानां उपकारः भवति।

The mundane souls help the support each other.

परस्पर सहायता में निमित्त होना यह जीवों का उपकार है।

स्वामी सेवक आदि कर्म से वृत्ति (व्यापार) को परस्परोपग्रह कहते हैं। स्वामी, नौकर, आचार्य (गुरु) शिष्य आदि भाव से जो वृत्ति होती है, उसको परस्पर उपग्रह कहते हैं, जैसे स्वामी अपने धन का त्याग करके (रूपयादि प्रदान करके) सेवक का उपकार करते है और सेवक स्वामी के हित प्रतिपादन और अहित के प्रतिषेध द्वारा उसका उपकार करता है। आचार्य (गुरु) उभय लोक का हितकारी मार्ग दिखाकर तथा हितकारी क्रिया का अनुष्ठान कराकर शिष्यों का उपकार करते है और शिष्य गुरु के अनुकूल वृत्ति से उपकार करते हैं।

यद्यपि उपग्रह का प्रकरण है, फिर भी इस सूत्र में 'उपग्रह' शब्द के द्वारा पूर्व सूत्र में निर्दिष्ट सुख-दुःख, जीवत और मरण इन चारों का ही प्रतिनिर्देश किया है। इन चारों के सिवाय जीवों का अन्य कोई परस्पर उपग्रह नहीं है, किन्तु पूर्व सूत्र में निर्दिष्ट ही उपकार है।

स्त्री-पुरुष की रति के समान परस्पर उपकार का अनियम प्रदर्शित करने के लिए पुनः 'उपग्रह' वचन का प्रयोग सुखादि में सर्वथा नियम परस्पर उपकार का नहीं है, यह बताने के लिए पुनः उपग्रह वचन का प्रयोग किया है।

क्योंकि कोई जीव अपने लिए सुख उत्पन्न करता हुआ कदाचित् दूसरे

जीव को वा दो जीवों को वा बहुत से जीवों को सुखी करता है और कोई जीव अपने को दुःखी करता हुआ दूसरे एक वा दो वा बहुत से जीवों के लिए सुख-दुःख उत्पन्न करता है। स्वयं दुःखी भी दूसरे को सुखी और स्वयं सुखी भी दूसरे को दुःखी कर सकता है। अतः कोई निश्चित नियम नहीं है कि सुखी सुख पहुँचाये और दुःखी दुःख ही करें।

मानव को स्वस्थ्य, सबल, क्रियाशील होने के लिए जिस प्रकार की मानव शरीर के हर अवयव को भी स्वस्थ्य, सबल, क्रियाशील होना आवश्यक है उसी प्रकार मानव समाजरूपी शरीर के अवयवभूत प्रत्येक मानव को भी स्वस्थ्य, सबल, क्रियाशील होने पर ही मानव समाज रूपी शरीर भी स्वस्थ्य, सबल, क्रियाशील होगा। यह ही यथार्थ से समाजशास्त्र/समाज मनोविज्ञान/सामाजिक जीवन चर्या है।

V-राष्ट्रीय जीवन चर्या

एक राष्ट्र में अनेक धर्म, भाषा, प्रजाति, संस्कृति, व्यवस्था आदि के समाज होते हैं। अर्थात् अनेक विध समाजों का समूह ही राष्ट्र है। जैसा कि अनेक विधं फल-फूलों के वृक्षों के समूह के समुदाय से वन-उपवन बनता है वैसा ही अनेक विध समाज के समूह के समुदाय से राष्ट्र बनता है। वन-उपवन के अभिन्न अंगभूत किसी भी प्रकार के फल-फूल के समूह विकास या विनाश का प्रभाव भी राष्ट्र के ऊपर पड़ता है। इसलिए राष्ट्र के सर्वोदय के लिए प्रत्येक समाज के समूह का भी सर्वोदय अनिवार्य है। प्रत्येक समाज के समूह के असंतुलन से राष्ट्र में भी असंतुलन उत्पन्न होता है जिससे राष्ट्र में विषमता, संघर्ष से लेकर गृहयुद्ध तथा विश्वयुद्ध भी संभव है। इसलिए प्रत्येक समूह को समान अधिकार, समान सुविधा होना चाहिए और प्रत्येक समूह का भी कर्त्तव्य है कि राष्ट्र की एकता, अखण्डता, समृद्धि, सुख-शांति के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। प्रत्येक समूह में राष्ट्रीयता, राष्ट्रभक्ति, राष्ट्रगौरव होने पर भी संकीर्ण, स्वार्थपूर्ण, कट्टर राष्ट्रवाद नहीं होना चाहिए। क्योंकि इससे राष्ट्र से लेकर विश्व में अनेकानेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

VI-वैश्विक जीवन चर्या

राष्ट्रों के तथा विश्व के सह-अस्तित्वमय शांतिपूर्ण सहजीवन ही विश्व है और तदनुकूल आचरण ही वैश्विक जीवन चर्या है। व्यापक अनेकांत/सापेक्षमय दृष्टिकोण से संपूर्ण विश्व एक ईकाई है, इसे जैन धर्म में महासत्ता या लोक कहते है। तो वैदिक धर्म में ब्रह्माण्ड कहते है और आधुनिक विज्ञान की अपेक्षा यूनिवर्स कहते है।

अतिगहन, सूक्ष्म, व्यापक, धार्मिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि से विश्व के हर स्थूल-सूक्ष्म, मूर्तिक-अमूर्तिक, चेतन-अचेतन तत्त्व/द्रव्य परस्पर अन्तः संबंध से जुड़े हुए हैं, परस्पर उपकृत हैं, अवलंबित हैं। इसे आधुनिक शोधरत वैज्ञानिक Unified theory/ Master theory कहते है तो जैन धर्म में इसका शोध लाखों-करोड़ों वर्षों से भी पहले हो गया था जिसे छह द्रव्यों के उपकार रूप में स्वीकार किया गया है। इसे हम संक्षिप्त से सूत्र रूप में **''परस्परोग्रहो द्रव्याणाम्''** अर्थात् विश्व के प्रत्येक द्रव्य परस्पर उपकार करते हुए सह-अस्तित्व रूप में रहते हुए भी अपना अस्तित्व को अक्षुण्ण रखते है। इसका एक स्थूल संक्षिप्त रूप है पर्यावरण सुरक्षा। इसको भारतीय संस्कृति में **''उदारपुरुषाणां वसुधैव कुटुम्बकम्''** कहते है। इन सब दृष्टिकोण से प्रत्येक मानव को प्रत्येक जीव तथा प्राकृतिक तत्त्वों के अस्तित्व, संरक्षण आदि को लक्ष्य में रखकर के मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमत से व्यवहार करना चाहिए। यह ही मेरी दृष्टि से वैश्विक जीवन चर्या है। क्योंकि एक द्रव्य के अस्तित्व से दूसरे द्रव्य के अस्तित्व भी अंतर्सम्बन्ध है।

ध्यान रहे कि व्यक्तिगत कमियाँ, विकृतियाँ जब पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, वैश्विक कमियों, विकृतियों में परिवर्तित, संक्रमण, प्रचार-प्रसार में आ जाती है तब भयंकर समस्या, विप्लव, युद्ध, विध्वंस आदि होते हैं। इसी प्रकार जब कमियाँ, विकृतियाँ परंपरा, संस्कृति के अंदर आ जाती है तब भी उपरोक्त समस्या आदि या उससे भी अधिक भयंकर समस्या आदि उत्पन्न हो जाती है, क्योंकि इन सब में सामूहिक शक्ति, बुद्धि, साधन, धन आदि का प्रयोग होता है। इन सबको दूर करने का सार्वभौम उपाय है आध्यात्मिक जीवन चर्या जो कि निम्न प्रकार है-

VII-आध्यात्मिक जीवन चर्या

वस्तुतः प्रत्येक सूक्ष्म से लेकर विशालकाय जीव आत्मस्वरूप होने से आध्यात्मिक रूप भी है तथापि मानव ही पूर्ण आध्यात्मिक जीवन चर्या कर सकता है। इतना ही नहीं आध्यात्मिक जीवन चर्या के माध्यम से आध्यात्मिक विकास करता हुआ आध्यात्मिक सर्वोच्च स्थान को प्राप्त करके भगवान् बन सकता है। ऐसा इतर जीव उस अवस्था में करने की योग्यता सम्पन्न नहीं होता है। इन सब दृष्टि से मानव आध्यात्मिक प्राणी भी है जो कि मानव की सर्वोच्च विशेषता है। इसलिए इस आध्यात्मिक जीवन चर्या तथा आध्यात्मिक पूर्ण विकास को लक्ष्य में रखकर मानव को पूर्व में वर्णित दोनों कक्षाओं की जीवन चर्या का निर्वाह करना चाहिए। इससे

मानव का अक्षय, अनंत सर्वोदय होगा जो मानव की बुद्धि, कल्पना, तर्कशक्ति से भी परे है। यथा-

कुबोधरागादिविचेष्टितैः फलं, त्वयापिभूयो जननादिलक्षणम्।
प्रतीहि भव्य प्रतिलोमवृत्तिभिः, ध्रुवं फलं प्राप्स्यासि तद्विलक्षणम्।। (106)

हे भव्य! तूने स्वयं कुज्ञान और रागादि रूप विपरीत चेष्टाओं के द्वारा जन्म-मरणादि रूप फल प्राप्त किया है। अतः अब तू ऐसी प्रतीति कर कि इनसे विपरीत प्रवृत्तियाँ करके उनके फल से विपरीत फल (मुक्ति) प्राप्त हो।

दयादमत्यागसमाधिसन्ततेः, पथि प्रयाहि प्रगुणं प्रयत्नवान्।
नयत्यवश्यं वचसामगोचरं, विकल्पदूरं परमं किमप्यसौ।। (107)

हे जीव! स्व-पर ही करुणा करना दया, इन्द्रिय-मन को वश करना दम, पर-पदार्थों से राग छोड़ना त्याग और वीतराग दशारूपी सुख समाधि है-इनकी परंपरा रूप मार्ग पर प्रयत्नशील होता हुआ निष्कपट होकर गमन कर-यही मार्ग तुझे वचन-अगोचर और निर्विकल्प परम पद की प्राप्ति करायेगा।

अकिञ्चनोऽहामित्यस्व त्रैलौक्याधिपतिर्भवेः।
योगिगम्यं तव प्रोक्तं रहस्यं परमात्मनः।। (110)

''मैं आकिञ्चन्य हूँ, मेरा कुछ भी नहीं है''-ऐसी भावना करके तू बैठ जा! इससे तू शीघ्र तीन लोक का स्वामी हो जाएगा। योगीश्वरों द्वारा गम्य परमात्मा बनने का यही रहस्य हमने तुझे कहा है।

यमनियमनितान्तः शान्तबाह्यान्तरात्मा,
परिणमितसमाधिः सर्वसत्त्वानुकम्पी।
विहितहि मिताशी क्लेशजालं समूलं,
दहती निहितनिद्रो निश्रचताध्यात्मसारः।। (225)

यम और नियम योग के मूल हैं। यम अर्थात् अयोग्य क्रियाओं का आजीवन त्याग और नियम अर्थात् घड़ी, पल, प्रहर, पक्ष, मास, चातुर्मास आदि की मर्यादा में संवर या त्याग। इनके पालन में साधु सदैव तत्पर रहते हैं। वे महाशांतचित्त वाले होते हैं। उनके भावों में देहादि बाह्य पदार्थों से निवृत्ति हो जाती है। समाधि अर्थात् निर्विकल्प दशारूप परिणमित होते हैं। सभी जीवों के प्रति दया भाव रखते हैं। विहित अर्थात् शास्त्रोक्त विधि से योग्य अल्पाहार लेते है। निद्राजयी होते हैं। अध्यात्म के

सारभूत आत्म स्वभाव का निश्चय करने वाले होते हैं। निरंतर आत्मानुभव में निमग्न होते हैं।

जीवनोपयोगी दोहा द्वादश-आ. कनकनन्दी

समय पे सो समय पे जागो समय पे करो ध्यान।
समय पे हो शौच क्रिया और समय पे करो स्नान।। (1)

समय पे करो प्रातः भ्रमण यौगिक क्रिया-सत्कर्म।
भोजन हो सात्विक और निरामिष अन्न-पान।। (2)

भोजन के आदि और अंत में धो हाथ-पैर हो कुल्ला।
आदि में मधुर चिकनाई सत्त्व अंत में हो लघु वाला।। (3)

मध्य-मध्य में पीओ पानी शुद्ध चबाओ बत्तीस बारा।
मौनपूर्वक हो शांत चित्त न हो कभी उतावला।। (4)

भोजन के बाद शतपद यात्रा विश्राम करो हो थोड़ा।
जीविकोपार्जन हो न्याय नीतिपूर्ण सदाचार सत्य बोला।। (5)

गुरुगुणीजने करो हो विनय दीन दुःखी पर दया।
हर जीव प्रति मैत्री की भावना समता भाव हो सदा।। (6)

परिवार हित समाज सहित वैश्विक हो प्रेम धारा।
शरीर के हित आध्यात्म सहित सापेक्ष हो भावधारा।। (7)

कट्टर रूढि संकीर्ण रहित हो जीवन की हर धारा।
हो आध्यात्मिक वैज्ञानिक युत सतत विकास धारा।। (8)

जहाँ हो वैश्विक आध्यात्मिक दृष्टि, होती है अनंत सीमा।
जहाँ हो भौतिक संकीर्णता दृष्टि, होती है संक्षिप्त सीमा।। (9)

पर के हित में होता है स्व-हित स्वयं हित जग हित।
परस्पर अनुगृहित है विश्व स्वयं-स्वयं सत्ता युक्त।। (10)

अन्तर पवित्र बाह्य शुचियुक्त मंगलमय है सदा।
समताभाव से होता है स्वस्थ्य तन-मन-आत्म मुदा।। (11)

पवित्रभाव में निवास है सदा ईश्वर व मोक्षधाम।
अपवित्रभाव जहाँ है वहाँ है नरक व दुःखधाम।। (12)

परिच्छेद-V

तृतीय-कक्षा

प्राचीन भारतीय दैनिक-जीवन चर्या व सामान्य ज्ञान

प्राचीन भारत में सर्वज्ञ तीर्थंकर, केवली तथा गणधर, आचार्य, उपाध्याय, साधु, ऋषि, मुनि, वैज्ञानिक, गणितज्ञ, आयुर्वेदज्ञ, पर्यावरणविज्ञ, भूगोलवेत्ता, शरीर विज्ञानी, भोजन विशेषज्ञ आदि हर विधा के विशेषज्ञ, अनुभवी ज्ञानी शोध विज्ञानी होने के कारण भारतीय प्राचीन ग्रंथों में दैनिक चर्या, जीवन चर्या, सामान्य ज्ञान आदि का भी सविस्तार वैज्ञानिक पद्धति से कार्य कारण परिणाम की दृष्टि से वर्णन पाया जाता है। निम्न में प्राचीन ग्रंथों से कुछ संक्षिप्त उद्धरण देकर उपर्युक्त विषयों को सिद्ध कर रहा हूँ। वैसे ही पूर्व में वर्णित विषयों का मूल स्त्रोत प्राचीन भारतीय शास्त्रों के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान-विज्ञान तथा मेरा प्रयोग एवं अनुभव भी है। विशेष परिज्ञान के लिए मेरी (1) धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान भाग I, II (2) आदर्श विचार-विहार-आहार (3) नैतिक शिक्षा सामान्य ज्ञान (4) शारीरिक-मानसिक आध्यात्मिक स्वास्थ्य के विविध आयाम आदि कृतियों का अध्ययन करें।

सर्वाः क्रियास्सुखार्थाः जीवानां न च सुखं बिना धर्मात्।

इति सुखकामैः प्राज्ञैः पुरैव धर्मो भवति कार्यः। (1) कल्याण का.पृ. 724

इसी प्रकार प्राणियों की सब प्रकार की क्रिया रूप प्रवृत्ति सुख के लिए हुआ करती है। सुख तो धर्म के बिना कभी प्राप्त नहीं हो सकता है। अतएव सुख चाहने वाले बुद्धिमानों को सबसे पहले स्व-धर्म का अनुष्ठान करना चाहिए।

न धर्मे चिकीर्षेत् न वित्तम् चिकीर्षेत्, न भोगान्बुभुक्षेत् न मोक्षं इयासीत्।

अनारोग्ययुक्तः सुधीरोपि मर्त्यश्, चतुर्वर्गसिद्धिस्तथारोग्यशास्त्रम्। (2)

अनारोग्य युक्त मनुष्य धीर-वीर होने पर भी वह धर्म का आचरण नहीं कर सकता, वह अर्थ का उपार्जन नहीं कर सकता, भोगों को भोग नहीं सकता, मोक्ष में जा नहीं सकता, उसे न चतुर्वर्ग की सिद्धि ही हो सकती है और न आरोग्य शास्त्र का अध्ययन ही हो सकता है।

पापजत्वात्त्रिदोषत्वान्मलधातुनिबंधनात्।

आमयानां समानत्वान्मांसं न प्रतिकारकम्।। कल्याण का.726

यह प्राणी मात्र की कर्मजन्य है। प्राणियों के रोग भी कर्मजन्य है। जिस प्रकार

कर्म के बिना रोग की उत्पत्ति नहीं हो सकती है, उसी प्रकार कर्म के बिना पुरुष की उत्पत्ति नहीं हो सकती है।

जन्मान्तरकृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते।

तच्छान्तिरौषधैर्दानैर्जपहोम सुरार्चनैः।।8।। योगरत्नाकर पृ.2

पूर्व जन्म में किया हुआ पाप रोग का रूप धारण कर पीड़ित करता है, उसकी शांति औषध, दान, जप, होम और देवता के आराधना-पूजन से होती है।

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनं, तदस्य यस्येत् स्थितयेऽशनादिना।

तथा यथाक्षाणि वशे स्युरुत्पथं, न वानुधावन्त्यनुबद्धतृर्इवशात्।।9।।

अनगार धर्मामृत प. 495

आगम में कहा है कि शरीर रत्नत्रयरूपी धर्म का मुख्य कारण है। इसलिये भोजन-पान आदि के द्वारा इस शरीर की स्थिति के लिए इस प्रकार का प्रयत्न करना चाहिए जिससे इन्द्रियाँ वश में रहे और अनादिकाल से संबद्ध तृष्णा के वशीभूत होकर कुमार्ग की ओर न जावें।

पूर्व जैनाचार्यों ने आरोग्य की आवश्यकता मुनियों के लिए भी है ऐसा स्वीकार किया गया है। आरोग्य के लिए आयुर्वेद का ज्ञान, आहार विधि, योग्य आचरण का भी ज्ञान आवश्यक है। कहा भी है-

आरोग्यशास्त्रमाधिगम्य मुनिर्विपश्चित्।

स्वास्थ्यं सं साधयति सिद्धसुखैकहेतुम्।।

अन्यस्वदोषकृतरोगनिपीडितांगो।

बध्नीति कर्म निजदुष्परिणामभेदात्।।89।। कल्याण का.

जो विद्वान् मुनि आरोग्यशास्त्र को अच्छी तरह जानकर उसी प्रकार आहार-विहार रखते हुए स्वास्थ्य रक्षा कर लेता है, वह सिद्ध सुख के मार्ग को प्राप्त कर लेता है। जो स्वास्थ्य रक्षा विधान को न जानकर, अपने आरोग्य की रक्षा नहीं कर पाता है वह अनेक दोषों से उत्पन्न रोगों से पीड़ित होकर अनेक, प्रकार के दुष्परिणामों से कर्मबंध कर लेता है।

न धर्मस्य कर्त्ता न चार्थस्य हर्ता, न कामस्य भोक्ता न मोक्षस्य पाता।

नरो बुद्धिमान धीरसत्वोऽपि रोगी, यतस्तद्विनाशाद्भवेन्नैव मर्त्यः।।90।।

मनुष्य बुद्धिमान, दृढ़मनस्क होने पर भी यदि रोगी हो तो वह न धर्म कर सकता है, न धन कमा सकता है और न मोक्ष साधन कर सकता है अर्थात् रोगी

धर्मार्थकाममोक्ष रूपी चतुः पुरुषार्थ को साधन नहीं कर सकता। जो पुरुषार्थ को प्राप्त नहीं कर पाता है वह मनुष्य भव में जन्म लेने पर भी, मनुष्य कहलाने योग्य नहीं है। क्योंकि मनुष्य भव की सफलता, पुरुषार्थ प्राप्त करने से ही होती है।

इत्युग्रादित्याचार्यवर्यप्रणीतं शास्त्रं, शस्त्रं कर्मणा मर्मभेदी।
ज्ञात्वा मर्त्यैस्सर्वकर्मप्रवीणैः, लभ्यंतैके धर्मकामार्थ मोक्षाः।।91।।

इस प्रकार उग्रात्याचार्य के द्वारा प्रतिपादित यह शास्त्र जो कर्मों के मर्म भेदन करने के लिए शस्त्र के समान है। इसे सर्व कर्मों में प्रवीण कोई मनुष्य जानकर, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं। अर्थात् इस शास्त्र में प्रवीण होकर इसके अनुसार अपने आरोग्य को रक्षण करके पुरुषार्थों का प्राप्त करना चाहिए।

जदं चरे जदं जिट्ठे जदमासे जदं सये।
जदं भुंजेज्ज भासेज्ज एवं पापं ण बज्झइं।। (1015)

यत्नपूर्वक गमन करे, प्रयत्नपूर्वक खड़े हो, यत्नपूर्वक बैठे, यत्नपूर्वक सोवे, यत्नपूर्वक आहार करे और यत्नपूर्वक बोले इस तरह करने से पाप का बंध नहीं होगा।

जदं तु चरमाणस्स दयापेहुस्स भिक्खुणो।
णवं ण बज्झदे कम्मं पोराणं च विधूयदि।। (1016)

यत्नपूर्वक चलते हुए दया से जीवों को देखने वाले साधु के नूतन कर्म नहीं बंधते हैं और पुराने कर्म झड़ जाते हैं।

साधारणतः जीव भोजन के कारण, असम्यक् प्रवृत्ति के कारण अयत्नपूर्वक उठने, बैठने, बोलने के कारण पाप कर्म को बाँधता है परन्तु वही कार्य यत्नपूर्वक विवेक सहित जीवों की रक्षा करते हुए करता है तो कम पाप बंध होता है। नारायण कृष्ण ने भी गीता में कहा है-

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।। (17) गीता पृ. 74

जो मनुष्य आहार-विहार में, दूसरे कर्मों में सोने-जागने में, परिमित रहता है उसका योग दुःख भंजन हो जाता है।

नात्यश्नतस्तु योर्गेऽस्ति न चैकान्तमनश्यतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रता नैव चार्जुना।। (16)

हे अर्जुन! यह समत्व रूप योग न तो प्राप्त होता है, ठूंसकर खाने वाले को, न उपवासी को, वैसा ही बहुत सोने वाले या बहुत जागने वाले को प्राप्त नहीं होता।

नित्यं हिताहार विहार सेवी, समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्ताः।

दाता समः सत्य परः क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः।। अष्टांग (36)

जो सतत हितकर आहार, योग्य विहार करता है, विवेकपूर्वक परिणाम को विचार करके प्रत्येक कार्य करता है, पंचेन्द्रिय विषय में आसक्त नहीं होता है, यथायोग्य पात्र को यथायोग्य दान देता है, लाभ-अलाभ, शत्रु-मित्र में समता भाव धारण करता है-सत्यग्राही, क्षमावान, देव-शास्त्र-गुरु, गुणीजन, वृद्धजनों की सेवा करता है वह निरोगी रहता है।

हिंसा सत्यं स्तेयमोहादि सर्वं, त्यक्त्वा धीमांश्चारुचारित्र युक्तः।

साधुन्संपूज्य प्राज्यवीर्याधियुक्ता, नारोग्यर्थी योजयेद्योगराजान्।। (29)

कल्याण का.पृ. 91

स्वास्थ्य की इच्छा रखने वाला मनुष्य हिंसा, झूठ, चोरी, परिग्रह, कुशील इत्यादि पापों को छोड़कर सदाचार में तत्पर होवे, सज्जन व संयमियों की सेवा करके अत्यंत शक्तिवर्धक योगराजों का प्रयोग करें।

यद्यतपापार्थं यच्चय पैशन्यहेतु, र्यद्यल्लोकानाप्रियं चाप्रशस्तं।

यद्यत्सर्वेषामेव बाधानिमित्तम्, तत्तत्सर्ववर्जनीयं मनुष्यैः।। (28)

जो-जो कार्य पापोपार्जन के लिए कारण हो, जो लोकोपवाद के लिए कारण हो, लोगों के लिए अप्रिय एवं अनर्गल हो और सबके लिए बाधा उत्पन्न करने वाले हो ऐसे कार्य को बुद्धिमान पुरुष कभी न करें।

एवं सद्वतैस्सज्जनं दुर्जनं वा, जन्माचारांतर्गतानिष्टवाक्यैः।

रागद्वेषात्यंतमोहैर्निमित्तैः, नैव ब्रूयात्स्वस्य संपत्सुखार्थी।। (26)

जो मनुष्य संसार में संपत्ति व सुख चाहता है उसे चाहिए कि वह सज्जन और दुर्जन के प्रति, जन्म (पैदाइश) संबंधी व आचार संबंधी अनिष्ट वचनों के प्रयोग न करे जो कि राग-द्वेष व मोह की उत्पत्ति के लिए कारण होते हैं।

यमैश्च सर्वैर्नियमैरूपेतो, मृत्युंजयाभ्यासरतो जितात्मा।

जिनेन्द्रबिंबार्चनयात्मरक्षां, दीक्षामिमां सावधिकां गृहीत्वा।। (25)

प्रतिनित्य यम या नियम व्रतों से युक्त रहें। मृत्युंजयादि मंत्रों को जपते रहे, इन्द्रियों को वश में रखें। जिनेन्द्र बिंब की पूजा से मैं अपनी आत्मरक्षा कर लूँगा इस प्रकार का नियम दीक्षा को लेवें।

दिवा निशं धर्मकथास्स श्रृण्वन्, समाहितो दान दयापरश्च।

शांति पयोमृष्टरसान्नपानै, स्संतर्पयन्साधुमुनीद्रंवृंदम्।। (26) कल्याणकारक

रात-दिन धर्म कथाओं को सुनते हुए सदा काल दया और दान में रत रहें। सदा सुंदर मिष्ट आहारों से शांत साधुगणों को तृप्त करते रहें।

सदातुरस्सर्वहितानुरागी, पापक्रियायाविनिवृत्तवृत्तिः।

वृषान्विमुंचन्नषदोहिनश्च, विमोचयन्बन्धनंपंजरस्थान्।। (27) कल्याणकारक

सदा रोगी सबका हितैषी बने और सबसे प्रेम रखें। सर्व पाप क्रियाओं को बिल्कुल छोड़ देवें। बंधन व पिंजर में बद्ध चूहे व अन्य प्राणियों को दया से छुड़ावें।

शाम्योपशांतिं च नरश्चभक्त्या, निनादभक्त्यां जिन चन्द्रभक्त्या।

एवंविधो दूरत एवं पापद्विमुच्येते, किं खलु रोग जालैः।। (28)

उपरोक्त प्रकार के सदाचरणों से जो मनुष्य अपनी आत्मा को निर्मल बना लेता है एवं जो जिनागम और जिनेन्द्र के प्रति भक्ति करता है, वह मनुष्य शांति व सुख को प्राप्त करता है। उस मनुष्य को पाप भी दूर से छोड़कर जाते हैं, दुष्ट रोग जाल क्यों उसके पास में जायेगा।

वशे यथा स्युरक्षाणि नोतधावन्त्यनूत्पथम्।

तथा प्रयतितव्यं स्याद्वत्तिमाश्रित्य मध्यमाम्।। (9)

(अ.ध.श्लो. 9 पृ. 495)

आगम में कहा है कि शरीर रत्नत्रयरूपी धर्म का मुख्य कारण है। इसलिये भोजन-पान आदि के द्वारा इस शरीर की स्थिति के लिए इस प्रकार का प्रयत्न करना चाहिए जिससे इन्द्रियाँ वश में रहे और अनादि काल से संबद्ध तृष्णा के वशीभूत होकर कुमार्ग की ओर न ले जावें।

भोजनेच्छाविघातात्स्यादंगमर्दोऽरुचिःश्रमः।

तन्द्रा लोचनदौर्बल्यं धातुदाहो बलक्षयः।। (यो.र.पृ. 65 श्लो. 101)

भोजन की इच्छा रोकने से हानि-भोजन की इच्छा होने पर भोजन न करने से अंगमद (शरीर का टूटना), भोजन में अरूचि, थकावट, तन्द्रा (आलस्य) नेत्र दुर्बलता, रसादिक धातुओं का दाह होना अर्थात् जठराग्नि द्वारा जलना और बल का क्षय होना ये सब होते हैं।

विघातेन पिपासायाः शोषः कण्ठास्योर्भवेत्।

श्रवणस्यावरोधश्च रक्तशोषो हृदि व्यथा।। (102)

प्यास रोकने से हानि-प्यास लगने पर रोकने से (जल नहीं पीने से) कंठ

और मुख सूखता है, कान में शब्द सुनाई नहीं (देते) पड़ते, रक्त सूखता है और हृदय में पीड़ा होती है।

रात्रौ निद्रालुःस्यान्मनुष्यः सुखार्थी, निद्रा सर्वेषां नित्यमारोग्य हेतुः।
निद्रा भंगे स्यात्सर्वदोषप्रकोपो, वर्ज्यानिद्रा स्यात्सर्वदैवाप्यमोघम्।। (24)

(कल्याण का.पृ. 90)

रात्रि में जो मनुष्य यथेष्ठ निद्रा लेता है, वह सुखी बन जाता है अथवा सुख की इच्छा रखने वाला रात्रि में निद्रा अवश्य लेवें। निद्रा सभी प्राणियों को आरोग्य का कारण है। निद्रा भंग होने से वातादि दोषों का उद्रेक होता है लेकिन रात-दिन निद्रा नहीं लेनी चाहिए।

दुराध्वन्यः श्रांतदेहः पिपासी, वातक्षीणो मद्यमत्तोऽतिसारी।
रात्रौ ये वा जागरूकास्तदर्धा, निद्रा सेव्या तैर्मनुष्यैर्दिवापि।। (25)

दूर से जो चलकर आया हो, थका हुआ हो, प्यासा हो, वात रोग से पीड़ित होकर क्षीण हो गया हो, अतिसार रोग से पीड़ित हो, मद्य पीकर मत्त हो गया हो एवं रात्रि में जो जगा हो वह मनुष्य जागरण से आधी नींद दिन में ले सकता है।

जैन आयुर्वेद कल्याणकारक से

भोजन क्रम-

स्निग्धं यन्मधुरं च पूर्वमशनं भुंजीत भुक्तिक्रमे।
मध्ये यल्लवणाम्लभक्षणयुतं पश्चात्तु शेषान्नसान्।
ज्ञात्वा सात्म्यबलं सुखासनतले स्वच्छे स्थिरस्तत्परः।
क्षिप्रं कोष्णमथ द्रवोत्तर सर्वर्तुसाधारणम्।। (17)

भोजन करने के लिए जिस पर सुखपूर्वक बैठ सके ऐसे साफ आसन पर, स्थिर चित्त होकर अथवा स्थिरतापूर्वक बैठें। पश्चात् अपनी प्रकृति व बल को विचार कर उसके अनुकूल, थोड़ा गरम (अधिक गरम भी न हो अधिक ठंडा भी न हो) सर्वऋतु के अनुकूल, ऐसे आहार को शीघ्र ही (अधिक विलंब भी न हो अत्यधिक जल्दी भी न हो) उस पर मन लगाकर खावें। भोजन करते समय सबसे पहले चिकना व मधुर अर्थात् हलुआ, खीर, बर्फी, लड्डू आदि पदार्थों को खाना चाहिए तथा भोजन के बीच में नमकीन, खट्टा आदि अर्थात् चटपटा मसालेदार चीजों को व भोजनांत में दूध आदि द्रवप्राय आहार खाना चाहिए।

दन्तान्तरगतं चान्नंशोधनेनाऽऽहरेच्छानैः।
कुर्यादनिहतं तद्धि मुखस्यानिष्टगन्धताम्।। (155) यो.र.

खरिका करने की विधि एवं गुण-दाँतों के भीतर लगे हुए अन्नादिकों को खरिका से धीरे-धीरे निकाले, इस प्रकार दाँतों में लगे हुए अन्नादि को निकालकर साफ नहीं करने से मुख से दुर्गंध आती रहती है।

भोजन के बाद की क्रिया

पश्चाद्धौतकरौ प्रमश्य सलिलं धात्सुचक्षुप्रदं।
प्रोद्यदृष्टिकरं विरूपविविधव्याधिप्रणाशावहं।।
ववस्त्रं पद्यसमं भवेत्प्रतिदिनं तनैव संरक्षितं।
वक्रव्यंगतिलातिकालकमलानीली प्रणाशावहं।। (43) कल्याणकारक

भोजन के अनंतर हाथों को धोकर, उनको परस्पर में थोड़ा रगड़कर उन जलयुक्त हाथों से आँखों का स्पर्श करना चाहिए। इससे नेत्र संबंधी रोग दूर होते हैं, दृष्टि शक्ति तेज होती है तथा और भी अनेक नेत्र संबंधी विकार नष्ट हो जाते हैं। इसी तरह हाथों को मलकर प्रतिदिन मुख का स्पर्श करे अर्थात् थोड़ा सा मले तो मुख कमल के समान कांति युक्त होता है तथा मुखगत व्यंग, तिलकालक, नीली आदि अनेक रोग दूर हो जाते हैं।

भुक्त्वाचम्य कषायतिक्तकटुकैः श्लेष्माणमुग्रं नुदेत्।
किंचिद्गर्वितवत्स्थितः पदशतं संक्रम्य शय्यातले।।
वामं पार्श्वमथ प्रपीड्य शनकै पूर्वं शयीत क्षण।
व्यायामादिविववर्जितो द्रवतरासेवी निषण्णोभवेत्।। (44)

इस प्रकार भोजन करने के पश्चात् अच्छी तरह कुल्ला करके कषाय, कडुवा, तीखा रसयुक्त पदार्थों को अर्थात् सुपारी, लवंग ताम्बूल आदि सेवन कर, या धुम्रपान धूम आदि का सेवन कर, उद्रिक्त, कफ को दूर करें। (क्योंकि भोजन करते ही कफ की वृद्धि होती है) पश्चात् गर्वित होकर बैठें, अर्थात् किसी की कुछ भी परवाह न कर निश्चिन्त चित्त से बैठें। बाद में सौ कदम चलकर, वाम पार्श्व को थोड़ा दबाकर उसी बाँयी बगल से थोड़ी देर सोवे और उठते ही व्यायाम आदि न करे और द्रव पदार्थ को सेवन करते हुए थोड़ी देर बैठना चाहिए।

सर्व साधारण की नैतिक क्रिया

प्राणाघातन्निवृत्तिः परधनहरणे संयमः सत्यवाक्यम्।
काले शक्त्या प्रदानं युवतिजनकथामूकभावः परेषाम्।।
तृष्णास्त्रोतोविभंगो गुरुषु च विनयः सर्व भुतानुकम्पा।
सामान्यं सर्वशास्त्रेष्वनुपहतविधिः श्रेयसामेषपंथा।। (26)

प्राण लेने से विमुखता, दूसरे के धन का हरण करने से अश्रद्धा, सत्य भाषण, समय पर यथा शक्ति दान, दूसरों की स्त्रियों के विषय में बातचीत न करना, तृष्णा के प्रवाह को रोकना, बड़े जनों से नम्र रहना, सब प्राणियों पर कृपा रखना ये धर्म के साधारण मार्ग हैं। जिनका समर्थन सभी शास्त्र करते है।

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
एते सामासिकं धर्म चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः।। (63) मनुस्मृति (पृ. 414)

अहिंसा (किसी को भी मन, वाणी और शरीर से दुःख न देना) सत्य बोलना, चोरी नहीं करना, पवित्रता और इन्द्रियों का निग्रह करना ये संक्षेप से चारों वर्णों का धर्म मनुजी ने कहा है।

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा।
एते गृहस्थप्रभावाश्चत्वारः पृथगाश्रमः।। (87)

ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासी, ये चारों आश्रम गृहस्थाश्रम से ही उत्पन्न होते हैं।

दूषितोऽपि चरेद्धर्म यत्र तत्राश्रमे रतः।
समः सर्वेषु भूतेषु न लिंग धर्मकारणम्।। (66)

जिस किसी आश्रम में रहता हुआ किसी दोष से दूषित होने पर भी सब प्राणियों को समान दृष्टि से देखता हुआ धर्मानुष्ठान करें। किसी आश्रम के चिह्न ही उस आश्रम धर्म के कारण नहीं होते।

फलं कतकवृक्षस्य यद्याप्यम्बुप्रसाकम्।
न नामग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदाति।। (67)

यद्यपि निर्मली का फल जल स्वच्छ करने वाला होता है किन्तु केवल उसका नाम लेने से ही जल स्वच्छ नहीं होता है।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यम क्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।। (92)

सन्तोष, क्षमा, मन को दबाना, अन्याय से किसी की वस्तु न लेना, शारीरिक पवित्रता, इन्द्रियों का निग्रह (विषयों से उन्हें रोकना) बुद्धि (शास्त्रादि तत्त्व का ज्ञान), विद्या (आत्म बोध), सत्य (यथार्थ कथन), क्रोध न करना ये दस धर्म के लक्षण हैं।

इन्द्रियाणां निरोधेन रागद्वेषक्षयेण च।
अहिंसया च भूतानाममृततत्त्वाय कल्पते।। (60)

इन्द्रियों के नियंत्रण से और राग-द्वेष के त्याग तथा प्राणियों की अहिंसा से संन्यासी मोक्ष को पाता है।

अवेक्षेत गतीर्न्नृणां कर्म दोषसमुद्भवाः।
निरये चैव पतनं यातनाश्च यमक्षये।। (61)

मनुष्यों के कर्म की गति, नरक में गिरने और यमलोक की विविध यातनाएँ- इनकी सदा चिन्ता करें।

विप्रयोगं द्रियैश्चैव संयोगं च तथाऽप्रियैः।
जरया चाभिभवनं व्याधिभिश्चोपपीडनम्।। (62)

प्रियों का वियोग, अप्रियों का सुयोग, बुढ़ापे में होने वाले क्षय आदि रोगों से कष्ट (कर्मदोष के) इन परिणामों को सोचे।

देहादुत्क्रमणं चास्मात्पुनर्गर्भे च संभवम्।
योनिकोटिसहस्त्रेषु सृतीश्चास्यान्तरात्मनः।। (63)

इस शरीर से फिर गर्भ में प्रवेश, प्राणों का वियोग और अनंत कोटि योनियों में भ्रमण करना यह सब अपने ही कर्मदोष का फल है।

अधर्मप्रभवं चैव दुःखयोगं शरीरिणाम्।
धर्मार्थप्रभवं चैव सुखसंयोगमक्षयम्।। (64)

शरीर धारियों के सब दुःख अधर्म से होते हैं और अक्षय सुख का संयोग धर्म से होता है।

सूक्ष्मतां चान्ववेक्षेत योगेन परमात्मनः।
देहेषु च समुत्पत्तिमुत्तमेष्वधमेंषु च।। (65)

योग द्वारा परमात्मा की सूक्ष्मता का विचार करे और कर्म दोष से उत्तम-अधम देहों में जन्म होने की बात सोचे।

अनार्यता निष्ठुरता क्रूरता निष्क्रियात्मा।
पुरुषं व्यंजयन्तीह लोके कलुषयोनिजम्।। (58) (मनुस्मृति पृ. 413)

अनार्यता (असाधुता) निष्ठुरता, क्रूरता, अकर्मण्यता-ये लक्षण इस संसार में कलुषित योनि में उत्पन्न पुरुषों के होते हैं।

आरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः।

कृते त्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः।। (83)

सतयुग में लोग धर्माचरण से सब मनोरथ सिद्ध करते हुए निरोग होकर चार सौ वर्ष तक जीते हैं। त्रेता, द्वापर और कलियुग में धर्म का ह्रास होने से क्रमशः एक-एक सौ वर्ष आयु घटती है।

महाकुल कुलीनार्य सभ्य सज्जन साधवः। (अमरकोष पृ. 130)

महाकुल, कुलीन, आर्य, सभ्य, सज्जन, साधु ये छः नाम सज्जन के हैं।

कर्त्तव्यपराचन् काम अकर्त्तव्यमनाचरन्।

तिष्ठि प्रकृताचारे सतु 'आर्य' इतिस्मृतः।

कर्त्तव्य कर्म को भली-भाँति पालन करने वाले को आर्य कहते हैं। महर्षि वेदव्यास ने महाभारत के उद्योग पर्व में **लोभ, मोह, क्रोध और गर्व से रहित सत्कार्यों में रत शीलवान् व्यक्ति को आर्य बतलाया है-**

न बैर मुद्दी प्रशान्तं न दर्पमारोहति नास्तेमेति।

न दुर्गतोपीति करोत्कार्यं समार्यशीलं परमाहरायाः।।

(आर्यावर्ता विसृजन्तो अधिक्षति 10.65.11)

आर्य के विषय के ऋग्वेद का कथन है कि आर्य वे है जो धरती पर सत्य, अहिंसा, पवित्रता, परोपकार आदि व्रतों का विशेष रूप से धारण करते हैं।

तितिक्षा मार्दवं शौचमार्दवं सत्यसंयमौ।

ब्रह्मचर्य तपस्यागाकिञ्चन्यं धर्मउच्यते।। (167)

(1) क्षमा (2) मार्दव (3) शौच (4) आर्जव (5) सत्य (6) संयम (7) ब्रह्मचर्य (8) तप (9) त्याग और (10) आकिंचन्य ये दस प्रकार के धर्म है। इनका विशेष स्वरूप तत्त्वार्थ सूत्रों की टीकाओं से जानना चाहिए।

यद्यत्स्वस्यानिष्टं तत्तद्वाक् चित्तकर्म्मभिः कार्यम्।

स्वप्नेऽपिना परेषामिति धर्मस्याग्रिंम लिंगम्।। (168)

धर्म का मुख्य (प्रधान) चिह्न यह है कि जो-जो क्रियाएँ अपने को अनिष्ट (बुरी) लगती हैं सो-सो अन्य के लिए मन, वचन, काय, से स्वप्न में

भी नहीं करनी चाहिए।

धर्मः शर्म भुजंगपुंकवपुरीसारं विधातुं क्षमो।
धर्मः प्रापितमर्त्यलोक विपुल प्रीतिस्तदाशंसिनाम्।।
धर्मः स्वर्गनगरी निरन्तर सुखास्वादोदयस्यास्पदम्।
धर्मः किं न करोति मुक्तिललनासंभोगयोग्यं जनम्।। (169)

यह धर्म धर्मात्मा पुरुषों को धरणेन्द्र की पुरी के सार मुख को करने में समर्थ है तथा यह धर्म उस धर्म के वांच्छक और उसके पालने वाले पुरुषों को मनुष्य लोक में विपुल प्रीति (सुख) प्राप्त कराता है और यह धर्म स्वर्ग पुरी के निरंतर सुखास्वाद के उदय का स्थान है तथा यह धर्म ही मनुष्य को मुक्ति स्त्री से संभोग करने योग्य करता है। धर्म और क्या-क्या नहीं कर सकता?

नरकनिपातस्त्यक्तु भत्यन्तमिष्ट, स्त्रिदशपति महर्द्धि प्राप्तुमेकान्ततो वा।
यदि चरमपुमर्थः प्रार्थनीयस्तदानीं, किमपरममिधेयं नाम धर्म विधत्त।। (178)

हे आत्मन्! यदि तुझे नरकनिपात को छोड़ना परम इष्ट है अथवा इन्द्र का महान् वैभव पाना एकांत ही इष्ट है, यदि चारों पुरुषार्थों में से अंत का पुरुषार्थ (मोक्ष) प्रार्थनीय ही है, तो और विशेष क्या कहा जावे, तू एक मात्र धर्म का सेवन कर क्योंकि धर्म से ही कर्म नष्ट होकर समस्त प्रकार के इष्ट की प्राप्ति होती है।

सव्व जगस्स हिदकरो धम्मो तित्थंकरेहि अक्खादो।
धण्णा तं पडिवण्णा विसुद्धमणसा जगेमणुया।। (752)

तीर्थंकरों द्वारा कथित सर्व जगत् का हित करने वाला है। विशुद्ध मन से उसका आश्रय लेने वाले जगत् में धन्य है।

जेणेह पाविदव्वं कल्लाणपरंपरं परमसोक्खं।
सो जिणदेसिदधम्मं भावेणुवणज्जदे पुरिसो।। (753)

जिसे इस जगत् में कल्याणो की परंपरा और परम सौख्य प्राप्त करना है वह पुरुष भाव से जिनेन्द्र देव द्वारा कथित धर्म को स्वीकार करता है।

खंतीमद्दवअज्जवलाघवतव संजमो आकिंचणदा।
तह होई बंभचेरं सच्चं चाओ य दसधम्मा।। (754)

क्षमा, मार्दव, आर्जव, लाघव, तप, संयम, आकिंचन्य तथा ब्रह्मचर्य, सत्य और त्याग ये दस धर्म हैं।

धर्म भावना का फल

उवसम दयाय खंती वड्ढई वेरग्गदा य जहजह से।
तह तह य मोक्खसोक्खं अक्खीणं भावियं होइ।। (755)

जैसे-जैसे इस जीव के उपशम, दया, क्षमा और वैराग्य बढ़ते हैं वैसे-वैसे ही अक्षय मोक्षसुख भावित होता है।

संसारविसमदुग्गे भवगहणे कह वि मे भमंतेण।
दिट्ठो जिणवर दिट्ठो जेट्ठोधम्मोत्ति चिंतेज्जो।। (756)

संसारमय विषय दुर्ग इस भव वन में भ्रमण करते हुए मैंने बड़ी मुश्किल से जिनवर कथित प्रधान धर्म प्राप्त किया है-इस प्रकार से चिन्तन करें।

पद्य विभाग

जीवन हो गुणग्राही

-आचार्य कनकनन्दी

जीवन में जब गुणग्राहिता होता है सच्चा विकास।
सत्यानुग्राही से होता है सदा सच्चा आत्मविश्वास।। (1)

गुणग्राहिता सीखे 'सूर्य' से प्रकाश सदा फैलाना।
चन्द्र से सीखे ह्रास-वृद्धि से कभी न खिन्न होना।। (2)

बादल से सीखे शीतल जल से धरा को शांत बनाना।
पवन से सीखे सर्व जीव को आनंद जीवन देना।। (3)

भूमि से सीखे क्षमा भाव से जीवों को साधन देना।
दरिया से दरिया दिल से सब को गले लगाना।। (4)

वृक्ष से सीखे भेदभाव बिना सब का भला करना।
नदी से सीखे गतिशील हो सबको प्यार पिलाना।। (5)

गो-माता से सीखे सदा ही निश्चल प्रेम करना।
दीपक से सीखे अंधियार से कभी न भय खाना।। (6)

चींटी से सीखे संगठन से सतत कार्य करना।
हंस से सीखे क्षीर-नीर से सदा ही क्षीर पीना।। (7)

फूलों से सीखे कोमल हृदय और सुवास फैलाना।
बीजों से सीखे विकास करके और बीजों को देना।। (8)

बच्चों से सीखे भेद-भाव हीन सरल हृदय होना।
पानी से सीखे गरम हो शीतल सदा ही आग बुझाना।। (9)
आकाश से सीखे सर्व गुणों को स्वयं में समा लेना।
आग से सीखे दुर्गुणों को सदा जला के राख बनाना।। (10)
धागा से सीखे कोमल होकर सबको मेल मिलाना।
सुई से सीखे भेद-भाव को नेक से मेल कराना।। (11)
कमल से सीखे दुर्गुणों से भी सुगुण सदा सीखना।
गेंद से सीखे मार खाकर फिर भी ऊँचे उठना।। (12)
घड़ी से सीखे सदा चलकर समयाचार लिखना।
लाठी से सीखे असहायों का सहयोग है करना।। (13)
लेखनी से सीखे स्व-इतिहास आचरण से ही लिखना।
श्वास से सीखे जीवन ही सदा प्रवाहमान होना।। (14)
दर्पण से सीखे आदर्श बनकर प्रतिबिंब झलकाना।
पतंग से सीखे सत्य की डोरी से विकास मार्ग में जाना।। (15)
जहाज से सीखे संसार जल के ऊपर ही सदा तैरना।
तैल से सीखे लघुता भाव से शीश पर चढ़ जाना।। (16)
कोयल से सीखे मधुर बोली से सत्य मित प्रिय बोलना।
मयूर से सीखे पर उन्नति से प्रसन्न सदा ही होना।। (17)
हीरा से सीखे दुर्जनों के मध्य कभी न दुर्जन होना।
श्रीफल से सीखे कठोर के मध्य कोमल मधुर होना।। (18)
बेंत से सीखे नम्रता से सदा व्यवहार शुभ ही करना।
मधुप से सीखे सदा सर्वदा सद्गुण ग्रहण करना।। (19)
कमण्डल से सीखे आय-व्यय का संतुलन है रखना।
पिच्छी से सीखे जीवों की रक्षा निर्लिप्त भाव रखना।। (20)
छैनी व हथौड़ी से सीखे जीवन सुघड़ बनाना।
तराजू यंत्र से सीखे सदा सत्य न्याय से जीना।। (21)
मथनी से सीखे सापेक्ष संघर्ष से भी सत्य पाना।
तूलिका से सीखे चारित्र चित्र सुंदर सदा बनाना।। (22)
कृषक से सीखे चारित्र वृक्ष भाव से उत्पन्न करना।

माली से सीखे जीवन उपवन फल-फूल से लद जाना।। (23)
बिन्दु से सीखे सिन्धु होने का मूलमंत्र लघु होना।
रेखा से सीखे समन्वय से छोटा से बड़ा होना।। (24)
त्रिभुज से सीखे सदा सर्वदा दृष्टिकोण सम होना।
समकोण से सीखे सर्वदा सीधा ही आगे बढ़ना।। (25)
छाया से सीखे सत्य से विपरीत होता है मिथ्याचार।
ज्योति से सीखे अंधकार को दूर ही दूर भगाना।। (26)
वृत्त से सीखे स्व-केन्द्र से विस्तार को है पाना।
वर्गाकार से सीखे चहुँमुखी विकास विषमहीन होना।। (27)
नव अंक से सीखे सर्वदा गुणवृद्धि में हो समभाव।
एक अंक से सीखे सर्वदा सर्वजीवे समब्रह्म।। (28)
सीखता ही रहना गुणग्राहिता से होता मानव महान्।
ऋषि-मुनि तथा वैज्ञानिक तक करते गुण ग्रहण।। (29)

सदुपयोग से उपकार तो दुरुपयोग से अपकार

-आचार्य कनकनन्दी

सदुपयोगे-दुरुपयोगे होता है अर्थ-अनर्थ।
स्वस्थ्य जन को घी है अमृत, रोगीजने अनर्थ।। (1)
शल्य क्रिया में अस्त्र प्रयोग होता है उपकारी।
सत्य विनाशे शास्त्र प्रयोग होता है अपकारी।। (2)
न्याय रक्षार्थे वाण प्रयोग होता है उपकारी।
सत्य विनाशे वाणी प्रयोग होता है अपकारी।। (3)
आत्म कल्याणे देह प्रयोग होता है उपकारी।
पाप कमाने देह प्रयोग होता है अपकारी।। (4)
जीव रक्षार्थे झूठ प्रयोग होता है उपकारी।
जीव विनाशे सत्य प्रयोग होता है अपकारी।। (5)
अच्छे कर्म में समय प्रयोग होता है उपकारी।
बुरे कर्म में समय प्रयोग होता है अपकारी।। (6)
व्यक्ति निर्माणे शिक्षा प्रयोग होता है उपकारी।
बुरे कर्म में शिक्षा प्रयोग होता है अपकारी।। (7)

दान पुण्य में धन प्रयोग होता है उपकारी।
व्यसन निमित्त धन प्रयोग होता है अपकारी।। (8)

न्यायवन्त का राजशासन भी होता है उपकारी।
भ्रष्ट नेता के लोकतंत्र भी होता है अपकारी।। (9)

संस्कार-युक्त निरक्षरी भी होता है उपकारी।
संस्कार-हीन साक्षरजन होते है अपकारी।। (10)

सम्यक्त्वयुत पशु जीवन होता है उपकारी।
सम्यक्त्व हीन मानव जन्म होता है अपकारी।। (11)

शील सहित रूप रहित होता है उपकारी।
शील रहित रूप सहित होता है अपकारी।। (12)

शान्ति सहित ख्याति रहित होता है उपकारी।
शान्ति रहित ख्याति सहित होता है अपकारी।। (13)

छोटा जीवन गुण प्रधान होता है उपकारी।
लंबा जीवन गुण विहीन होता है अपकारी।। (14)

प्रेम सहित कुटिया युक्त होता है उपकारी।
प्रेम रहित महल युक्त होता है अपकारी।। (15)

हितकारक कटुवचन होता है उपकारी।
कुटिलयुत मिष्ठवचन होता है अपकारी।। (16)

आडम्बर शून्य धर्म साधन होता है उपकारी।
आडम्बर पूर्ण धर्म साधन होता है अपकारी।। (17)

समतायुत देह दण्ड रहित होता है उपकारी।
समतारिक्त देह दण्ड सहित होता है अपकारी।। (18)

प्रभु का नाम न लेना आत्मध्यान करना होता है उपकारी।
प्रभु का नाम लेना खोटा काम करना होता है अपकारी।। (19)

धार्मिक वेश-भूषा रहित शुद्धभाव सहित होता है उपकारी।
धार्मिक वेश-भूषा सहित खोटा भाव सहित होता है अपकारी।। (20)

स्व-आत्मचिन्तन

-आचार्य कनकनन्दी

सच्चिदानंद है मेरा नाम, ज्ञाता दृष्टा मेरा काम।

दूर हटो अज्ञान परिणाम मोहभाव से मेरा क्या काम।। (1)
मेरे भाव में मेरा परिणाम दूर हटो दुष्कृत विभाव।
दूसरों से यदि हो विभाव यह तो मेरा गुलाम भाव।। (2)
दर्पण में सम प्रतिबिंब ज्ञान सर्व यह है आदर्श चिह्न।
प्रतिबिंब में हो विकार दर्पण नहीं है सम आकार।। (3)
ज्ञान में हो ज्ञेयाकार तो भी न हो ज्ञानविकार।
यह है मेरा स्वामीरूप अन्यथा हो तो भृत्यरूप।। (4)
स्व-स्वरूप से विश्व मालिक बाह्य वैभव से कंगाल रूप।
स्वयं का यदि न हो मालिक विश्व का होता है दास रूप।। (5)
राग-द्वेष के वश में होना, मोहभाव को गले लगाना।
बड़ी गुलामी की यह निशानी, इसको जीते केवलज्ञानी।। (6)
राजा हो या महाराजा चक्रवर्ती हो कोई प्रजा।
राग-द्वेष के जो होता वश, वो होता है दास अवश्य।। (7)
जीभ के वश में सुभौम चक्री मारा गया और हुआ नारकी।
काम के वश में रावण राजा मारा गया व प्रजा विनाशी।। (8)
मोह विजयी परिग्रह त्यागी वीतरागी जिन विश्व के स्वामी।
सत्ता व संपत्ति के त्यागी अनंत वैभव के होते स्वामी।। (9)
सब के अंदर प्रभुत्व शक्ति, प्रभुता त्याग से होती जागृति।
बीज के अंदर वृक्षत्व शक्ति बीजत्व त्याग से होती उत्पत्ति।। (10)
ईंधन के मध्ये अग्नि की शक्ति ज्वलन क्रिया से होती उत्पत्ति।
आत्म निहित परमात्म शक्ति पवित्रता से होती जागृति।। (11)
पवित्रता के है उपाय समता-शांति वैराग्य-भाव।
पाप त्याग और आत्म ध्यान पवित्र भाव के है निशान।। (12)
व्यसन त्याग फैशन त्याग वैरत्व त्याग ईर्ष्या भी त्याग।
त्याग का भी घमण्ड त्याग पवित्रता का यह ही राज।। (13)
आकर्ष विकर्ष संघर्ष भाव चिदाकाश में नहीं संभव।
भेद विभेद नाम विभाव चिन्मयाकाशे नहीं संभव।। (14)

दर्पण = ज्ञान, प्रतिबिंब = ज्ञेय, चिह्न = लक्षण

परिच्छेद-VI
चतुर्थ-कक्षा
मानव धर्म : आवश्यकता : परिणाम

सत्य सा द्रव्य या जीव के स्व-स्व स्वभाव या गुण-प्रकृति को धर्म कहते हैं तथा इससे विपरीत अथवा विकृति को अधर्म कहते हैं। प्रकारान्तर से सार-संक्षेप से कहे तो सत्य या सत्य के गुण-स्वभाव ही धर्म है। जीव की अपेक्षा से विस्तार कहे जीव में जो सत्यनिष्ठा, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, क्षमा, मृदुता, सरल-सहजता, पवित्रता, संयम, सत्पुरुषार्थ, सद्विश्वास, सदाचार, सहिष्णुता, एकाग्रता, ध्यान, परोपकार, सह-अस्तित्व, प्रगतिशीलता, नम्रता, त्याग आदि गुण हैं वे ही जीव के धर्म है।

आधुनिक पृथ्वी में प्रचलित धर्म-दर्शन-विज्ञान-इतिहास-पुराण आदि से ज्ञात होता है कि पृथ्वी में सर्वश्रेष्ठ जीव मानव है तथा मानव के द्वारा उपलब्ध-प्रचलित-प्रसारित-समस्त धर्मादि का शोध-बोध-आविष्कार-प्रचार-प्रायोगिककरण होता है। इन सबका कारण मानव की प्रज्ञा-दक्षता-कार्यक्षमता आदि है। परन्तु जब मानव अपनी उपर्युक्त योग्यता का दुरुपयोग करता है तब वह स्व-पर-राष्ट्र-प्रकृति-विश्व के लिए विध्वंसकारी-अहितकारी बन जाता है। प्राकृतिक दोहन-शोषण-प्रदूषण से लेकर युद्ध तथा प्रलय के लिए भी मानव बहुअंश में उत्तरदायी है। अतः उपर्युक्त अनर्थ से बचने के लिए मानव को भले वह किसी भी जाति-धर्म-देश आदि से संबंधित क्यों न हो निम्नोक्त मानव धर्म को पालन करना विधेय है, हितकर है। यथा-

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।

एते सामासिकं धर्म चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः।। (63) मनुस्मृति पृ. 414

अहिंसा (किसी को भी मन, वाणी और शरीर से दुःख न देना) सत्य बोलना, चोरी नहीं करना, पवित्रता और इन्द्रियों का निग्रह करना ये संक्षेप से चारों वर्णों का धर्म मनुजी ने कहा है।

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थो यतिस्तथा।

एते गृहस्थप्रभवाश्चत्वारः पृथगाश्रमाः।। (87) मनुस्मृति पृ. 218

ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासी, ये चारों आश्रम गृहस्थाश्रम से ही उत्पन्न होते हैं।

दूषितोऽपि चरेद्धर्म यत्र तत्राश्रमे रतः।

समः सर्वेषु भूतेषु न लिंग धर्मकारणम्।। (66) मनुस्मृति पृ. 214

जिस किसी आश्रम में रहता हुआ किसी दोष से दूषित होने पर भी सब प्राणियों को समान दृष्टि से देखता हुआ धर्मानुष्ठान करें। किसी आश्रम के चिह्न ही उस आश्रम धर्म के कारण नहीं होते।

फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बुप्रसाकम्।

न नामग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदति।। (67)

यद्यपि निर्मली का फल जल स्वच्छ करने वाला होता है किन्तु केवल उसका नाम लेने से ही जल स्वच्छ नहीं होता है।

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।

धीर्विद्या सत्यम क्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।। (92) मनुस्मृति पृ. 219

संतोष, क्षमा, मन को दबाना, अन्याय से किसी की वस्तु न लेना, शारीरिक पवित्रता, इन्द्रियों का निग्रह (विषयों से उन्हें रोकना) बुद्धि (शास्त्रादि तत्त्व का ज्ञान), विद्या (आत्म बोध), सत्य (यथार्थ कथन), क्रोध न करना ये दस धर्म के लक्षण हैं।

इन्द्रियाणां निरोधेन रागद्वेषक्षयेण च।

अहिंसया च भूतानाममृततवाय कल्पते।। (60) मनुस्मृति पृ. 213

इन्द्रियों के नियंत्रण से और राग-द्वेष के त्याग तथा प्राणियों की अहिंसा से संन्यासी मोक्ष को पाता है।

अवेक्षेत गतीर्न्नृणां कर्म दोषसमुद्भवाः।

निरये चैव पतनं यातनाश्च यमक्षयेः।। (61)

मनुष्यों के कर्म की गति, नरक में गिरने और यमलोक की विविध यातनाएँ- इनकी सदा चिन्ता करें।

विप्रयोगं द्रियैश्चैव संयोगं च तथाऽप्रियैः।

जरया चाभिभवनं व्याधिभिश्चोपपीडनम्।। (62)

प्रियों का वियोग, अप्रियों का सुयोग, बुढ़ापे में होने वाले क्षय आदि रोगों से कष्ट (कर्मदोष के) इन परिणामों को सोचे।

देहादुत्क्रमणं चास्मात्पुनर्गर्भे च संभवम्।

योनिकोटिसहस्त्रेषु सृतीश्चास्यान्तरात्मनः।। (63)

इस शरीर से फिर गर्भ में प्रवेश, प्राणों का वियोग और अनंत कोटि योनियों में

भ्रमण करना यह सब अपने ही कर्मदोष का फल है।

अधर्मप्रभवं चैव दुःखयोगं शरीरिणाम्।

धर्मार्थप्रभवं चैव सुखसंयोगमक्षयम्।। (64)

शरीरधारियों के सब दुःख अधर्म से होते हैं और अक्षय सुख का संयोग धर्म से होता है।

सूक्ष्मतां चान्ववेक्षेत योगेन परमात्मनः।

देहेषु च समुत्पत्तिमुत्तमेष्वधमेषु च।। (65)

योग द्वारा परमात्मा की सूक्ष्मता का विचार करे और कर्म दोष से उत्तम-अधम देहों में जन्म होने की बात सोचे।

अनार्यता निष्ठुरता क्रूरता निष्क्रियात्मा।

पुरुषं व्यंजयन्तीह लोके कलुषयोनिजम्।। (58) मनुस्मृति पृ. 413

अनार्यता (असाधुता), निष्ठुरता, क्रूरता, अकर्मण्यता-ये लक्षण इस संसार में कलुषित योनि में उत्पन्न पुरुषों के होते हैं।

आरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः।

कृते त्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः।। (83) मनुस्मृति पृ. 17

सतयुग में लोग धर्माचरण से सब मनोरथ सिद्ध करते हुए निरोग होकर चार सौ वर्ष तक जीते है। त्रेता, द्वापर और कलियुग में धर्म का ह्रास होने से क्रमशः एक-एक सौ वर्ष आयु घटती है।

महाकुल कुलीनार्य सभ्यसज्जन साधवः। अमरकोष पृ. 130

महाकुल, कुलीन, आर्य, सभ्य, सज्जन, साधु ये छः नाम सज्जन के है।

कर्त्तव्यपराचरन् कामं अकर्त्तव्यमनाचरन्।

तिष्ठि प्रकृताचारे स तु 'आर्य' इतिस्मृतः।।

कर्त्तव्य कर्म को भली-भाँति पालन करने वाले को आर्य कहते हैं। महर्षि वेदव्यास ने महाभारत के उद्योगपर्व में लोभ, मोह, क्रोध और गर्व से रहित सत्कार्यों में रत शीलवान व्यक्ति को आर्य बतलाया है-

न बैर मुद्दी पयति प्रशान्तं न दर्पमारोहति नास्तेमेति।

न दुर्गतोपीति करोत्कार्यं समार्यशीलं परमाहरायाः।।

(आर्यावर्ता विसृजन्तो अधिक्षमि 10.65.11)

आर्य के विषय में ऋग्वेद का कथन है कि आर्य वे हैं जो धरती पर सत्य,

अहिंसा, पवित्रता, परोपकार आदि व्रतों को विशेष रूप से धारण करते हैं।

धर्म का स्वरूप

धर्मं कर्मं निवर्हणं संसार दुःखतः सत्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे।।

र. श्रावकाचार

अर्थात् धर्म संसारी जीव को समस्त मानसिक, शारीरिक एवं आध्यात्मिक दुःखों के कारण भूत कर्मों को नाश करके अनंत सुख में धारण कराता है। इससे सिद्ध होता है कि धर्म के माध्यम से अधिदैविक, अधिभौतिक एवं आध्यात्मिक तथा इहलोक, परलोक आदि के भय एवं दुःखों से निवृत्ति होती है एवं जीव को शाश्वतिक, अतीन्द्रिय, आध्यात्मिक अनंत सुख प्राप्त होता है। कहा भी है

यस्मात् अभ्युदय निश्रेयस् सिद्धिः स धर्मः।

जिससे स्वर्गादि का अभ्युदय सुख एवं निर्वाण रूपी परम सुख की सिद्धि होती है, उसको धर्म कहते हैं। कहा है-**''धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो''** अर्थात्-धर्म सर्व प्रकार के सुख मिलता है। इसलिए है! सुख इच्छुक भव्य जीवो! धर्म को ही संचित करिए। धर्म को छोड़कर संसारी जीवों का कोई भी हित करने वाला नहीं है। धर्म का मूल दया है अर्थात् करूणा या अहिंसा है। धर्म में ही मैं अपने चित्त को प्रतिदिन लीन करता हूँ। हे जगत् उद्धारक! सुख-शांतिप्रदायक! धर्म मेरा पालन कीजिए।

पवित्र क्रियते येन येनैव ध्रियते जगत्।
नमस्तस्मै दयार्द्राय धर्म कल्पाङ्घ्रिपाय वै।।

जिससे जीव पवित्र हो जाता है और जो विश्व को धारण करता है, दया से आर्द्र धर्म रूपी कल्पवृक्ष के चरण को मैं नमस्कार करता हूँ। अर्थात् धर्म से ही पतित जीव पावन हो सकता है, दानव मानव बन सकता है, मानव महामानव और भगवान् बन सकता है। यह संपूर्ण चराचर विश्व धर्म पर आधारित है।

धर्मो गुरुश्च मित्रं च धर्मःस्वामी च बांधवः।
अनाथ वात्सल सोऽयं यः त्राता कारणं विना।।

धर्म ही गुरु है, मित्र है, स्वामी है, बंधु है, अनाथ का रक्षक है और बिना स्वार्थ के रक्षण करने वाला है।

धम्मो मङ्गलमुक्किट्ठं अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सयामणो।।

धर्म ही लोक में उत्कृष्ट मङ्गल है, अहिंसा धर्म है, संयम धर्म है एवं तप धर्म है। जिसका मन सर्वदा धर्म में लीन रहता है, उसको स्वर्ग के देव भी नमस्कार करते हैं।

वत्थु सहावो धम्मो, अहिंसा खमादि आद धम्मो।
रयणत्तयं य धम्मो अणेयंत सुभावणा धम्मो।। **-आ. कनकनन्दी**

वस्तु का स्वभाव धर्म है। अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह एवं उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिञ्चन्य, ब्रह्मचर्य ये आत्म धर्म हैं। रत्नत्रय अर्थात् सम्यक्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्चारित्र धर्म है। अनेकांत (स्याद्वाद), बारह भावना एवं मैत्री, प्रमोद, करुणा एवं माध्यस्थ भाव भी धर्म हैं। इस संक्षिप्त गाथा सूत्र में जो धर्म की विभिन्न परिभाषाएँ दी गयी हैं, शब्दतः पृथक्-पृथक् होते हुए भी भाव से एक ही है। इसमें प्रायः विश्व में प्रचलित संपूर्ण संप्रदाय की धार्मिक परिभाषाएँ गर्भित हैं। वस्तु-स्वभाव धर्म यह सामान्य परिभाषा है। चेतन-अचेतन द्रव्य में जो स्व-स्वभाव है, वही धर्म है, जैसे-पुद्गल का धर्म जड़त्व एवं जीव का धर्म चेतनत्व है। इस गाथा में संपूर्ण परिभाषाएँ चेतन द्रव्य अर्थात् जीव द्रव्य का स्वभाव रूप धर्म की परिभाषाएँ हैं। उपर्युक्त धर्म से समस्त शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, भौतिक, सामाजिक सुख से लेकर आत्मोत्थ अनंत अक्षय आध्यात्मिक सुख की उपलब्धि होती है। उपर्युक्त आध्यात्मिकता/धर्म से विपरीत अधर्म से विभिन्न दुःख/रोग उत्पन्न होते हैं। यथा-

अधर्म का स्वरूप एवं उसका कुफल

हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम्।।

The destructive or dangerous (and) censurable (character of the 5 faults) injury, etc. in this (also) in the next world (ought to be) meditaed upon.

हिंसादि पाँच दोषों में ऐहिक और पारलौकिक अपाय और अवद्य का दर्शन भावने योग्य है।

अभ्युदय और निःश्रेयस् के साधनों का नाशक अपाय है, या भय का नाम अपाय है। अभ्युदय (स्वर्गादि इहलौकिक संपदा) और निःश्रेयस् (मोक्ष) की क्रिया एवं साधनों के नाशक अनर्थ को अपाय कहते हैं। अथवा इहलोक भय, परलोक भय, मरण भय, वेदना भय, अगुप्ति भय, अनरक्षक भय, अकस्मात भय इन सात

प्रकार के भय को अपाय कहते हैं।

गर्ह्य निंदनीय को अवद्य कहते हैं। ऐसा चिंतवन करना चाहिए कि हिंसक नित्य उद्विग्न रहता है। सतत अनुबद्ध वैर वाला होता है। इस लोक में वध (मारण)-बंधन, क्लेश आदि को प्राप्त करता है और मरकर परलोक में अशुभ गति में जाता है और लोक में भी निंदनीय होता है। अतः हिंसा से विरक्त होना ही कल्याणकारी है। मिथ्याभाषी का कोई विश्वास नहीं करता है। असत्यवादी इस लोक में जिह्वाच्छेद आदि के दंड को भोगता है। जिसके संबंध में झूठ बोलता है वे उसके वैरी हो जाते हैं। अतः उनसे भी अनेक आपत्तियाँ आती हैं। मरकर अशुभ गति में जाता है और निंदनीय भी होता है। अतः असत्य बोलने से विरक्त होना कल्याणकारी है। परधन के ग्रहण करने में आसक्त चित्त वाला चोर सर्वजनों के द्वारा तिरस्कृत होता है, निरंतर भयभीत रहता है। इस लोक में अभिघात (मारपीट), वध-बंधन, हाथ-पैर, कान-नाक, ओष्ठ आदि का छेदन-भेदन और सर्वस्व हरण आदि दंड भोगता है (प्राप्त करता है) और मरकर परलोक में अशुभ गति में जाता है। अतः चोरी से विरक्त होना ही श्रेयस्कर है तथा अब्रह्मचारी (कुशील सेवी) मानव मदोन्मद हाथी के समान हथनी से ठगाया हुआ हथनी के वशीभूत हुआ हाथी-मारन-ताड़न-बंधन-छेदन आदि अनेक दुःखों को भोगता है। उसी प्रकार परस्त्री के वश हुआ मानव वध-बंधनादि को भोगता है। मोहाभिभूत होने के कारण कार्य (करने योग्य) अकार्य (नहीं करने योग्य) के विचार से शून्य होकर किसी शुभ कर्म का आचरण नहीं करता है। परस्त्री का आलिंगन तथा उसके संग में रति करने वाले मानव का सर्व लोक वैरी बन जाता है। परस्त्रीगामी इस लोक में लिंग छेदन, वध-बंधन, क्लेश, सर्वस्व हरणादि के दुःखों को प्राप्त होते है तथा मरकर परलोक में अशुभ गति में जाते है और यहाँ निंदनीय होते हैं। अतः अब्रह्म से विरक्त होना ही श्रेयस्कर है, आत्महित कारक है तथा परिग्रहवान् पुरुष माँसखंड को ग्रहण किये हुए पक्षी की तरह अन्य पक्षियों के द्वारा झपटा जाता है। चोर आदि के द्वारा अभिभवनिय (तिरस्कृत) होता है। उस परिग्रह के अर्जन, रक्षण और विनाश कृत अनेक दुःखों को प्राप्त होता है। जैसे-ईंधन से अग्नि तृप्त नहीं होती उसी प्रकार परिग्रह से तृप्ति नहीं होती। लोभ कषाय से अभिभूत होने से कार्य अकार्य से अनभिज्ञ हो जाता है। परिग्रहवान् मानव मरकर परलोक में नरक, तिर्यंचादि अशुभ गति में जाता है। ''यह लोभी है, कंजूस है'' इत्यादि रूप से निंदनीय होता है। अतः परिग्रह का त्याग करना ही श्रेयस्कर है। ये हिंसादि पाप अपाय और अवद्य के कारण

है ऐसी निरंतर भावना भानी चाहिए।

दुःखमेव वा।

One must also meditale, that the five faults, injury etc. are pain personified, as they themselves are the veritable wonbs of pain.

अथवा हिंसादिक दुःख ही है ऐसी भावना करनी चाहिए।

दुःख के कारण होने से हिंसा, असत्य, चोरी, अब्रह्मचर्य एवं परिग्रह दुःख स्वरूप हैं। क्योंकि हिंसादिक पाप से इहलोक में शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक आदि दुःख मिलते हैं और परलोक में भी नरक-तिर्यंच आदि दुर्गति में जीव को अनेक कष्ट प्राप्त होते हैं। इसका कारण यह है कि हिंसादिक पाप असाता वेदनीय कर्म के आस्रव के कारण है और असाता वेदनीय दुःख का कारण है इसलिए दुःख के कारण या दुःख के कारण जो हिंसादिक है उनमें दुःख का उपचार है।

जिस समय जीव हिंसादि पाप करता है उस समय में उसका भाव दूषित हेाने के कारण जो कर्मास्रव होता है वह कर्मास्रव पाप प्रकृति रूप में परिणमन कर लेता है। यह पाप ही उस पापी को अनेक प्रकार का दुःख देता है। पाप प्रवृत्ति के समय जो दूषित भाव होता है उससे मानसिक तनाव, मानसिक उद्वेग, चिंता, भय आदि उत्पन्न होते हैं जिसके कारण उसे तत्काल भी मानसिक कष्ट एवं यातनाएँ मिलती हैं जिससे विभिन्न मानसिक रोग के साथ-साथ शारीरिक रोग होता है। जैसे-ब्लड प्रेशर बढ़ना, सिरदर्द, कैंसर, टी.बी., हृदय गति रुकना (हार्टफेल), उन्माद, पागलपन आदि रोग होते हैं। इतना ही नहीं इस लोक में ही अपमान, प्रताड़ना, जेल जाना, सामाजिक प्रतिष्ठा का ह्रास, अविश्वास, शत्रुता, कलह यहाँ तक कि प्राण दण्डादि कष्ट मिलते हैं। जो हिंसा करता है उसके फलस्वरूप इस जन्म में उसकी हिंसा हो सकती है पर जन्म में अकाल मरण, रोग आदि यातनाएँ सहन करनी पड़ती हैं।

झूठ बोलने से दूसरों का विश्वास झूठ बोलने वाले पर से उठ जाता है जिह्वा छेद आदि दण्ड मिलता है। केवल एक बार झूठ बोलने पर राजा वसु का स्फटिकमय सिंहासन फट गया। वह नीचे गिरा तथा पृथ्वी भी फट गई और वह पृथ्वी में समावेश होकर नरक में गया। मिथ्या बोलने वाला परभव मे गूँगा (मूक) होता है, मुँह में घाव होता है और मुँह में से बदबू आती है।

चोरी करने वाला इस जन्म में अनेक शारीरिक दण्ड को पाता है। उस पर कोई विश्वास नहीं करता है। राजा सरकारादि उसके धन अपहरण करके जेल में दण्ड देते

हैं, यहाँ तक कि कभी-कभी प्राण दण्ड मिलता है। परभव में भिखारी बनता है एवं उसका भी धन अपहरण अन्य के द्वारा किया जाता है।

मैथुन सेवन से शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक कष्ट होता है क्योंकि आयुर्वेद के अनुसार एक बार संभोग से जो वीर्य क्षय होता है उतना वीर्य कुछ दिन के भोजन से तैयार होता है। इससे सुजाक, मस्तिष्क दुर्बलता, शारीरिक शक्ति का ह्रास, स्मरण शक्ति का ह्रास, रोग-प्रतिरोधक शक्ति की कमी आदि अनेक विपत्तियाँ आ घेरती हैं। वर्तमान में जो एड्स रोग ने विश्व में आतंक फैलाया है उस महारोग की उत्पत्ति एवं वृद्धि अब्रह्मचर्य से ही हुई है। अब्रह्मचर्य से ही जनसंख्या की वृद्धि होती है और इसकी वृद्धि से खाद्याभाव, आवास का अभाव, प्रदूषण में वृद्धि, भुखमरी, समुचित शिक्षा-दीक्षा का अभाव आदि अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। अब्रह्मचारी-अति कामुक व्यक्ति हिताहित विवेक से रहित होकर परस्त्री गमन, वेश्या गमन आदि कार्य भी करता है। जिससे उसे अपमान, दण्ड, सामाजिक अप्रतिष्ठा आदि अनेक समस्याएँ आ घेरती हैं। कभी-कभी कुशील सेवन से प्राणदण्ड तक मिलता है।

इष्टोपदेश में पूज्यपाद स्वामी ने काम भोग से उत्पन्न दुःख का वर्णन निम्न प्रकार किया है-

आरम्भे तापकान्प्राप्तावऽतृप्तिप्रतिपादकान्।
अन्ते सुदुस्त्यजान् कामान्, काम कः सेवते सुधीः।। (17)

आरम्भ में संताप के कारण और प्राप्त होने पर अतृप्ति के करने वाले तथा अंत में जो बड़ी मुश्किल से भी छोड़े नहीं जा सकते, ऐसे भोगोपभोग को कौन विद्वान्-समझदार-ज्यादती व आसक्ति के साथ सेवन करेगा?

किमपीदं विषयमयं, विषमतिविषमं पुमानयं येन।
प्रसभमनुभूयं मनोभवे-भवे नैव-चेतयते।।

अहो! यह विषयमयी विष कैसा गजब का विष है कि जिसे जबर्दस्ती खाकर यह मनुष्य, भव-भव में नहीं चेत पाता है।

''जैन धर्म में हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील को जैसे पाप माना है वैसे ही परिग्रह को भी पाप माना है। पाप का अर्थ है-पतन। जिसके कारण जीव पतित होता है उसे पाप कहते है। सचित्त एवं अचित्त परिग्रह के कारण जीव अनेक कष्टों को उठाता है तथा अनेक पापों को करता है। परिग्रह संचय के कारण ही समाज में धनी-गरीब, शोषक-शोषित, मालिक-मजदूर आदि विपरीत विषम परिस्थिति से युक्त व्यक्ति का

निर्माण होता है। जिसके पास परिग्रह रहता है वह अधिक लोभी, अधिक शोषक, गर्वी बन जाता है। क्योंकि परिग्रह के कारण उसे धनमद हो जाता है। इसे ही कबीरदास ने कहा है-

कनक-कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय।
वे खाये बौराय नर, वे पावे बौराय।।

कनक (धन, संपत्ति) कनक (धतुरा, विषाक्त फल) से भी सौ गुनी मादक गुणयुक्त है। क्योंकि कनक (धतुरा) को खाने पर जीव नशायुक्त (पगले) हो जाते हैं, कनक (धन-संपत्ति) को प्राप्त करते ही जीव मदयुक्त हो जाता है।

धन-संपत्ति (परिग्रह) सर्वथा, सर्वदा दुःखदायी है। पूज्यपाद स्वामी ने इष्टोपदेश में कहा भी है-

दुरर्ज्येनासुररक्ष्येण, नश्वरेण धनादिना।
स्वस्थं मन्यो जनः कोऽपि ज्वरानिव सर्पिषा।। (13)

जैसे कोई ज्वर वाला प्राणी घी को खाकर या चुपड़ कर अपने को स्वस्थ मानने लग जाय, उसी प्रकार कोई एक मनुष्य मुश्किल से पैदा किए गए तथा जिसकी रक्षा करना कठिन है और फिर भी नष्ट हो जाने वाले हैं, ऐसे धनादिकों से अपने को सुखी मानने लग जाता है।

अर्थस्योपार्जने दुःखमपर्जितस्य च रक्षणे।
आये दुःखं व्यये दुःखं, धिगर्थ दुःखभाजनम्।।

धन अर्जित करने में दुःख, उसकी रक्षा करने में दुःख, उसके जाने में दुःख, इस तरह हर हालत में दुःख के कारण रूप धन को धिक्कार हो।

दहनस्तृणकाष्ठसंचयैरपि तृप्येदुदधिर्नदीशतैः।
न तु कामसुखैः पुमानहो, बलवत्ता खलु कापि कर्मणः।।

यद्यपि अग्नि घास लकड़ी आदि के ढेर से तृप्त हो जाये, समुद्र, सैकड़ों नदियों से तृप्त हो जाये, परंतु वह पुरुष इच्छित सुखों से कभी भी तृप्त नहीं होता। अहो! कर्मों की कोई ऐसी ही सामर्थ्य या जबर्दस्ती है।

आध्यात्मिक विहीनता से विविध रोग-दुःख

(1) असंयम-जीभ को असंयमी रखने से वह चाहे जैसे स्वाद में रस लेने लगती है और चाहे जितना खाने को आतुर रहती है। परिणाम स्वरूप पेट में अधिक अयोग्य भोजन जल्द चला जाता है और वह पेट या आंतड़ियों में रोग उत्पन्न करता

है। इसी प्रकार जीभ के असंयमी होने पर यदि वह चाहे जैसे वाणी उच्चारण करे तो जीभ द्वार संबंधित मस्तिष्क के ज्ञान तंतुओं को हानि पहुँचती है। कुछ समय पश्चात् जीभ कैंसर या लकवा हो जाने की स्थिति में पहुँच जाती है। जन्म से उत्पन्न गूँगे बालक वाणी के दुरुपयोग का दंड इस नये जन्म में पाते हैं। असंयमी व्यवहार से ही अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार चक्षु, कर्ण, स्पर्श, घ्राण, मन, धन, समय, श्रम, वचन आदि के असंयम से भी तन-मन-धन-स्वास्थ्य-समय-साधन संबंधी अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। जैसा कि स्पर्शन इन्द्रिय, काम-चेतना के असंयम से वेश्या रमण, परस्त्री गमन से एड्स आदि भयंकर रोग होते हैं। जिसकी चिकित्सा एवं औषधि का शोध-बोध-आविष्कार अभी तक नहीं हो पाया है। इसी प्रकार यातायात आदि के असंयम से दुर्घटना होती है, जिससे जन-धन की क्षति होती है। इसी प्रकार मानसिक असंयम (तनाव, क्रोध, हीन भावना, अहं भावना, निषेध परक चिंतन आदि) से अनेक शारीरिक, मानसिक रोग हो जाते हैं।

(2) असत्य-असत्य बोलने वाले व्यक्ति की जीवन शक्ति नष्ट हो जाती है और वह सामान्य रोग का भी भोगी बन जाता है। जीवन शक्ति आधार 'तेज' है और वह तेज असत्य से नष्ट हो जाता है। असत्य बोलने वाला तेजहीन हो जाता है साथ ही असत्य बोलने से हृदय और मस्तिष्क के ज्ञान तंतुओं की हानि होती है। कुछ समय पश्चात् वह हृदय के रोग, पागलपन, पथरी, लकवा आदि रोगों से भी दुःखी हो जाये तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। असत्य चिंतन, कथन, व्यवहार, लेखन आदि से मस्तिष्क, बुद्धि को अतिरिक्त शक्ति का उपयोग अथवा यथार्थ से कहे तो दुरुपयोग करना पड़ता है। संक्लेश, तनाव, भय, व्यग्रता, ग्लानि, अस्थिरता, मानसिक चंचलता, अशांति आदि झेलना पड़ता है।

(3) अभिमान-मनुष्य में वायु, पित्त और कफ तीनों को एक साथ सन्निपात के रूप में उत्पन्न करने वाला अभिमान है और इसीसे किसी कवि ने कहा है कि- ''पाप मूल अभिमान'' यह अभिमान ही मनुष्यों के दुर्गुणों का राजा है और सब दोषों तथा रोगों को आकर्षित करके लाने वाला बलवान् लोहे का चुंबक है। अभिमानी व्यक्ति वायु, पित्त और कफ के छोटे-बड़े अनेक रोगों से दुःखी रहता है। मनोविज्ञानानुसार अभिमान के अहंग्रंथि कहते हैं। इसके कारण व्यक्ति स्वयं की छोटी-खोटी सी उपलब्धि को बहुत बड़ी मानता है और दूसरों की या स्व-शुद्धात्मा की महान् उपलब्धि को छोटी-खोटी मानता है, जिससे व्यक्ति का सर्वांगीण सर्वोच्च विकास नहीं हो पाता

है। अभिमान के कारण व्यक्ति के शरीर-मन-वचन-व्यवहार में विनम्रता, सरल-सहजता, परिवर्तनशीलता, अंगभंगुरता के परिवर्तन में अकड़पना, जकड़पना, कठोरता आदि दुर्गुण होते हैं। इससे कुंठा, तनाव, व्यग्रता, गर्व (अहंकार) का वर्ग (खंडन) होने का भय आदि शारीरिक, मानसिक रोग हो जाते हैं। इसलिए कहा है-''**विद्या ददाति विनयम्, विनयात् याति पात्रताम्। पात्रतात् धनमाप्नोति, धनात् धर्म ततः सुखम्।**''

(4) ईर्ष्या-ईर्ष्या करने वाले मनुष्य में पित्त बढ़ जाता है जिससे उस मनुष्य की इन्द्रियों की तेजस्विता नष्ट हो जाता है। ऐसे मनुष्य की बुद्धि और हृदय पित्त के तेजाब में जल जाते हैं एवं वह किसी काम में प्रगति नहीं कर पाता। ऐसे मनुष्य पित्त, पथरी, जलन, लीवर खराबी आदि रोगों से दुःखी रहते हैं। ईर्ष्या के कारण व्यक्ति दूसरों की अच्छाई, सच्चाई, प्रगति, प्रशंसा, संपत्ति, बुद्धि, त्यागवृत्ति, सेवा आदि उत्तम प्रशंसनीय गुणों से भी जलता है। वह स्वयं की रेखा को बिना बढ़ाये दूसरों की रेखा को छोटा कर/मिटाकर स्वयं की रेखा को बड़ा करना चाहता है। इसे विध्वंसात्मक प्रतिस्पर्द्धा कहते है।

(5) दंभ-दंभी लोग कफ के परिणाम में गड़बड़ उत्पन्न करते है। उनके दंभी स्वभाव से उनमें कफ के समान भारीपन आ जाता है। उनकी समस्त इन्द्रियाँ तेजस्विता छोड़कर स्थूल हो जाती हैं। शरीर की पूरी बनावट भारीपन, गैस और इसी प्रकार कफजन्य अनेक रोग दंभ के कारण ही होते हैं।

(6) क्रोध-बिगड़े हुए मन से अशक्य जैसी अनेक कामनाओं के पूर्ण न होने से अथवा उनमें विघ्न आने से क्रोध उत्पन्न होता है। क्रुद्ध मनुष्य दूसरे की हानि कर सकेगा या नहीं यह तो दैवाधीन है, परंतु सर्वप्रथम वह स्वयं की हानि करता ही है। क्रोध करने में मनुष्य के मस्तिष्क को अपने बहुमूल्य एवं अधिक ओज शक्ति का उपयोग करना पड़ता है। इस प्रकार अमूल्य ओज नष्ट हो जाता है और परिणाम स्वरूप जीवन शक्ति नष्ट होती चली जाती है। तदुपरांत क्रोध के मस्तिष्क में आते ही ओज के विशाल एवं विकृत प्रवाह से मस्तिष्क के ज्ञानतंतु क्षीण हो जाते हैं। बिजली का प्रवाह घर में लगे हुए परिमाणिक मात्रा में आने पर बल्ब जलता है परंतु अधिक मात्रा में आने पर बल्ब को नष्ट कर देता है और कभी-कभी तो घर को हानि भी पहुँचाता है। इससे रक्षा पानी के लिए घर के बाहर फ्यूज की व्यवस्था की जाती है। संयम और विवेक ही हमारे फ्यूज है। इन्हें त्याग देने पर ओज का अत्याधिक प्रवाह

क्रोध के रूप में उत्पन्न हो जाता है और मस्तिष्क के कितने ही भागों को जोखिम में डाल देता है। विशेष रूप से क्रूद्ध मस्तिष्क को अधिक मात्रा में रक्त की आवश्यकता पड़ती है। वह रक्त राशि मस्तिष्क की ओर जाने वाले लघु रक्त प्रवाह को खींच लेती है। क्रोधी मनुष्य की मुख और आँखें कैसी लाल हो जाती हैं। यह सबको अनुभव होगा। हँसते समय मुँह लाल होता है क्योंकि मुँह की समग्र पेशियाँ विकसित होने से हृदय की ओर से खून खिंच आने से ऐसा होता है। विशेष शुद्ध खून मिलने से वैसी ही पेशियाँ पुलकित होने से यह लालिमा लाभप्रद है और सौंदर्यवर्धक भी है, परंतु ठीक इसके विपरीत क्रोधी की शक्ल बिगड़ती जाती है और उसके बुद्धि-बल भी धीरे-धीरे क्षीण होने लगते हैं।

(7) हिंसा–हिंसा क्रोध और अभिमान से उत्पन्न होती है। इसमें प्रवृत्त रहने वाले व्यक्ति का रक्त सदा खौलता एवं गर्म रहता है। हिंसा में मस्तिष्क और हृदय दोनों गंदे होते हैं। अभिमान और क्रोध से उत्पन्न रोगों के उपरांत ऐसे मनुष्य में हृदय से उत्पन्न रोग भी होते हैं। पराया दुःख देखकर जो हृदय एकदम नरम बनकर द्रवित होने लगता है, वही हृदय अपने दुःखों के सामने वज्र जैसा कठोर भी बन जाता है। यह हृदय की सत्य और वास्तविक स्थिति का गुण है। हिंसा वाले मनुष्य हृदय के ये गुण नष्ट हो जाते हैं। वह लोगों का दुःख देखकर हँसता है और अपने ऊपर दुःख पड़ने पर निम्न श्रेणी का भीरु बन जाता है। तत्पश्चात् हृदय में और संपूर्ण शरीर में गर्म रक्त भ्रमण करने से शरीर में वायु, पित्त और कफ-इन तीनों का उत्पन्न करता है, जिससे वह महाभयंकर रोगों का शिकार बन जाता है। ''क्रिया प्रतिक्रिया सिद्धांत'' के अनुसार जो दूसरों की हिंसा करता है उसकी भी हिंसा होती है, दुर्घटना-रोग आदि से अपमृत्यु होती है।

(8) छल-कपट–कपट करने वाला व्यक्ति भी सूक्ष्म रूप से हिंसा ही करता है। परंतु उसकी हिंसा करने की युक्ति मायामय-कपटमय होने से दिखायी नहीं देती। वह असाधारण विष-जैसी होती है। इससे ऐसे मनुष्य भी ऊपर वर्णित हिंसा वाले व्यक्ति के समान ही रोगों का शिकार बन जाते। परंतु उसे जो रोगों का दण्ड मिलता है, वह धीरे-धीरे असर करने वाले विष के समान ही होता है। छल-कपट करने वाला व्यक्ति इस भय से चिन्तित, व्यग्र, भयभीत रहता है कहीं मेरे छल-कपट प्रगट नहीं हो जावे-इससे अनेक दैहिक-मानसिक रोग उत्पन्न हो जाते हैं; जिसके कारण मुँह से अधिक दुर्गंधी आती है, भोजन सही रूप से पाचन नहीं होता है, कब्जियत रहता है,

मल-मूत्र का विसर्जन देरी से होता है।

पाप, अधर्म, असंयमादि से जायमान विविध कष्ट, दुःख, समस्या, रोग आदि का शोध-बोध करके प्राचीन भारतीय मनीषियों ने उससे बचने के उपायभूत पुण्य, धर्म, आध्यात्मिक, संयम, उदारता आदि का प्रतिपादन भी किया है।

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम्।

व्रत Vow is to be free from-हिंसा Injury, अनृत Falsehood, स्तेय Thift, अब्रह्म Unchastity और परिग्रह Worldly attachment (of worldly objects) से निवृत्त होना व्रत है।

आस्रव पदार्थ के व्याख्यान की प्रतिज्ञा करके आस्रव के एक सौ आठ भेदों की संख्या का अनेक रीतियों से विचार किया है अर्थात् आस्रव के भेद कहे हैं। पुण्यरूप और पापरूप कषायों का निमित्त होने से वह आस्रव दो प्रकार का है-एक पुण्यास्रव, दूसरा पापास्रव। उन पुण्य एवं पाप आस्रवों में से अब पुण्यास्रव का वर्णन करते हैं। पुण्यास्रव प्रधान है, क्योंकि मोक्ष पुण्यास्रव पूर्वक ही होता है अर्थात् आस्रव के विचार में कहा गया पुण्यास्रव मोक्ष में परंपरा से कारण होने से इस समय व्याख्येय है।

विरमण का नाम विरति है। चारित्रमोहनीय कर्म के उपशम, क्षय और क्षयोपशम के निमित्त से औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक चारित्र की प्रकटता होने से जो पापों विरक्ति होती है, उसे विरति कहते हैं।

अभिसंधिकृत नियम व्रत कहलाता है। बुद्धिपूर्वक परिणाम वा बुद्धिपूर्वक पापों का त्याग अभिसंधि है। 'यह ऐसा ही करना है, अन्य प्रकार से निवृत्ति है;' ऐसे नियमों को अभिसंधि कहते हैं। अभिसंधिकृत (बुद्धिपूर्वक किया हुआ) नियम सर्वत्र व्रत कहलाता है। अर्थात् शुभ कार्यों में प्रवृत्ति और अशुभ से निवृत्ति ही व्रत है। व्रत में किसी अन्य कार्य से निवृत्ति ही मुख्य होती है।

हिंसादि पाँच पापों के त्याग से केवल शुभास्रव नहीं होता है; परंतु अशुभ आस्रव का निरोध (संवर) भी होता है। पाँच पापों के त्याग से केवल परलोक ही नहीं सुधरता है; परंतु इहलोक अर्थात् वर्तमान जीवन भी आदर्श एवं सुखमय बनता है। जैन धर्म में तो हिंसादि पाँचों पापों तथा अहिंसादि पाँचों व्रतों का वर्णन अत्यंत विस्तार से विभिन्न दृष्टिकोणों से सटीक किया गया है। अन्य धर्म में भी इसका वर्णन यत्र-तत्र पाया जाता है। हिन्दू धर्म के महान् ऋषि याज्ञवल्क्य आदि ने भी अहिंसादि को धर्म

कहा है। यथा-

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
दानं दया दमः क्षान्तिः सर्वेषां धर्मसाधनम्।।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय (अचौर्य), शौच (शुद्धता, निर्लोभता, पवित्रता), इन्द्रिय निग्रह (संयम), दान, दया, दम (दुष्प्रवृत्तियों को रोकना), क्षांति (क्षमा धारण करना) ये सब धर्म के लिए साधन स्वरूप हैं।

पातञ्जलि योगदर्शन में महर्षि पातञ्जलि ने भी अष्टांग योग का वर्णन करते हुए यम को प्रथम स्थान दिया है। बिना यम आगे के सात अंगों से भी योग (ध्यान) की सिद्धि नहीं हो सकती है। जैन धर्म में जिसको पञ्चव्रत कहा है उसको पातञ्जलि ने यम कहा है। पाँच यम यथा-

अहिंसा सत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।। (30)

अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पाँच यम कहे जाते हैं।

हिंसादि पाँचों पापों के त्याग से एवं अहिंसा आदि पाँच व्रतों के सेवन से जो लाभ होता है उसका वर्णन स्वयं पातञ्जलि ने निम्न प्रकार किया है-

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सान्निधौ वैरत्यागः।। (35)

अहिंसा विषयक पूर्ण स्थिरता हो जाने पर अहिंसा प्रतिष्ठ योगी की सन्निधि में आने पर प्राणियों का स्वाभाविक वैर भी निवृत्त हो जाता है (उस समय नेवला-साँप-चूहा, शेर-बकरी भी अपना वैर भूला देते हैं)।

सत्य प्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्।। (36)

सत्य विषयक प्रतिष्ठा की प्राप्ति होने पर शुभाशुभ क्रिया से होने वाले धर्माधर्म एवं इस धर्माधर्म का फल स्वर्ग-नरकादि का आश्रय योगी बन जाता है।

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपरस्थानम्।। (37)

अस्तेय विषयक प्रतिष्ठा की प्राप्ति होने पर सभी प्रकार के रत्नों की उपस्थिति होती है; कहने का तात्पर्य यह है कि अस्तेय प्रतिष्ठ योगी की इच्छा होने पर देश-देशांतरों के सब प्रकार के हीरे, मोती आदि रत्न उपस्थित हो जाते हैं।

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।। (38)

ब्रह्मचर्य विषयक प्रतिष्ठ प्राप्त होने पर वीर्य (सब प्रकार की विशिष्ट शक्ति) का लाभ होता है।

अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः।। (39)

अपरिग्रह विषयक स्थिरता प्राप्त होने पर भूत, भावी तथा वर्तमान जन्म तथा उन जन्मों की विशिष्टता का साक्षात्कार इस योगी को होता है।

शौचात्स्वाङ्गजुगुप्सा-परैरसंसर्गः।। (40)

शौच के पूर्णतः अनुष्ठान से अर्थात् शौच की स्थिरता से योगी के मन में अपने अंगों के प्रति ग्लानि अथवा घृणा उत्पन्न होती है और दूसरों को स्पर्श करने का भाव दूर हो जाता है अर्थात् चाहे व्यक्ति कितना ही पवित्र क्यों न हो योगी का मन उसे स्पर्श करना नहीं चाहता है।

(1) सापेक्ष विचार, अनेकांत सिद्धांत, सहिष्णुता (उदारता)-विश्व के प्रत्येक द्रव्य/घटक/घटनाओं के अनेक गुण-धर्म/पक्ष/कारण होने के कारण उन्हें उन-उन दृष्टियों से देखना चाहिए, समझना चाहिए, कथन करना चाहिए। इसे ही अनेकांत सिद्धांत, स्याद्वाद आदि कहते हैं। इसके कारण बौद्धिक विकास, भावात्मक विशालता, आत्मा की पवित्रता, कथन में लचीलापन/मृदुता आती है, जिससे सत्यग्राहिता, नम्रता, सहिष्णुता आती है तथा संकीर्णता, कटुता, झगड़ा, कलह, द्वेष, कूट, युद्ध, विग्रह, हिंसा, मानसिक रोग आदि घटते हैं। यह गुण उस व्यक्ति में प्रगट होता है जो अंधविश्वास, संकीर्णता, घमंड, पूर्वाग्रह, हठाग्राही, मायाचारी आदि दुर्गुणों से रहित होता है।

(2) अहिंसा-पवित्र भाव होना भाव अहिंसा है और भाव अहिंसा सहित स्व-पर का मन-वचन-काय, कृत-कारित-अनुमति से क्षति नहीं पहुँचाना द्रव्य अहिंसा है। इससे स्व-पर की समग्रता से सुरक्षा, समृद्धि होती है। स्व तथा भाव अहिंसा होने पर ही, स्व-पर तथा द्रव्य अहिंसा का पालन हो सकता है। अहिंसा के कारण राग-द्वेष, अपना-पराया, भेद-भाव, ऊँच-नीच, ईर्ष्या-कलह, युद्ध, आतंकवाद, हत्या, आक्रमण आदि का अभाव हो जाता है, जिसके कारण विश्व में सुख-शांति-समृद्धि होती है। इसीलिए **''अहिंसा परमो धर्मः,''** **''अहिंसामृतम्''** है। इससे **'सह अस्तित्व', 'सहयोग', 'आत्मवत् सर्वभूतेषु', 'जीओ और जीने दो', 'पर्यावरण सुरक्षा,' 'पारिस्थितिकी सिद्धांत'** को बल मिलेगा, जिससे विश्व की समस्या स्वरूप बिखराव, भेदभाव, संकीर्ण-कट्टर राष्ट्रवाद, धर्मोन्माद के कारण जायमान हिंसा, आतंकवाद, राष्ट्रीय गृह कलह से लेकर विश्व युद्ध, पर्यावरण असंतुलन से जायमान अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकंप, बवण्डर, चक्रवात, अकाल, बाढ़, मृदा-जल-वायु-

ध्वनि-भाव प्रदूषण तथा विभिन्न रोग दूर होंगे।

(3) सत्य–सत्य ही सार्वभौम, सार्वकालिक, त्रैकालिक अबाधित होने के कारण समस्त विश्व से लेकर राष्ट्रीय, पारिवारिक एवं व्यक्तिगत प्रतिष्ठा, स्थिति, समृद्धि, शांति भी सत्य में निहित है। वस्तु स्वरूप, स्वशुद्ध आत्मस्वरूप सत्य होने के कारण सत्य में किसी भी प्रकार की विकृति, समस्या संभव नहीं है। निश्चयतः स्व-आत्म स्वरूप में स्थित होना परम सत्य है जिसे मोक्ष, निर्वाण, ईश्वरत्व कहते हैं। व्यवहारतः दूसरों की सत्ता, संपत्ति, विभूति, प्रसिद्धि, बुद्धि, कृति, जमीन आदि का अनैतिकतापूर्वक अपना नहीं मानना एवं नहीं बनाना, सत्य है। दूसरों की सत्ता, संपत्ति आदि को स्वीकार करना एवं मान्यता देना भी सत्य है। पूर्वोक्त दोषों से रहित होकर यथार्थ स्वरूप को स्वीकार करना सत्य है। इससे व्यक्तिगत कलह, तनाव से लेकर राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय कलह, तनाव, कानूनी लड़ाई, वैमनस्य, पक्षपात आदि समस्याएँ समाप्त हो जाती हैं।

(4) अचौर्य–दूसरों की सत्ता, संपत्ति का अनैतिक रूप से बलात् या धोखाधड़ी से स्व-अधिकार में नहीं करना अचौर्य है। इससे चोरी, डकैती, भ्रष्टाचारी, मिलावट, घोटाला, घुसपैठ, घूसखोरी, अपहरण, दूसरे देश पर आक्रमण, सैल्सटैक्स-इकमटैक्स चोरी, कर्त्तव्य चोरी आदि समस्याएँ दूर हो जाती हैं।

(5) अपरिग्रह–आध्यात्मिक दृष्टि से स्व-आत्म द्रव्य को छोड़कर अन्य किसी चेतन-अचेतन द्रव्य को ग्रहण करना परिग्रह है। व्यवहार से अनैतिक चेतन-अचेतन द्रव्यों को ग्रहण करना, अति संग्रह करना, अति लालसा या गृद्धता रखना परिग्रह है। उपरोक्त परिग्रह से विपरीत अपरिग्रह है अर्थात् निश्चय से स्व-शुद्ध आत्मा ही अपरिग्रह है और व्यवहारतः आवश्यक वस्तु को छोड़कर अन्य वस्तुओं को ग्रहण नहीं करना अपरिग्रह है। इससे गरीब-अमीर, शोषक-शोषित, मजदूर-पूँजीपति, नौकर-मालिक, शोषण-मिलावट, चोरी, डकैती, बेईमानी, रिश्वतखोरी, कालाबाजारी, महँगाई, अभाव, भूखमरी आदि समस्याएँ संभव ही नहीं होती हैं।

महावीर भगवान् का अपरिग्रहवाद पूर्ण आध्यात्मिक, नैतिक, साम्यवाद, समाजवाद है। इसके लिए किसी प्रकार बल प्रयोग, हिंसात्मक कार्यवाही की आवश्यकता ही नहीं होती क्योंकि यह सब स्वेच्छा से, आत्म प्रेरणा से होता है। परिग्रह के कारण जायमान बड़े-बड़े उद्योग, फैक्ट्री, यान-वाहन से उपजी ध्वनि-वायु-जल-मृदा प्रदूषण, ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन परत में छेद, कृत्रिम तापमान की वृद्धि आदि समस्याएँ नहीं

होती हैं, जिससे अनेक शारीरिक-मानसिक रोग नहीं होते हैं।

(6) ब्रह्मचर्य-ब्रह्म यानि आत्मा में रमण करना ब्रह्मचर्य है। व्यवहारतः समस्त स्त्री-पुरुष जनित भोग का त्याग करना ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्याणुव्रत में स्व-स्त्री या स्व-पुरुष से मर्यादित, नैतिक संभोग करना ब्रह्मचर्याणुव्रत है। इससे अब्रह्मचर्य से जायमान जनसंख्या वृद्धि, एड्स रोग आदि बीमारियाँ दूर होती हैं। जनसख्या वृद्धि से उपजी अनेक समस्याएँ यथा-निवास, यातायात, भोजन, पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य, कुपोषण आदि का भी निराकरण होता है। इसीलिए भगवान् महावीर ने पंचशील को अभ्युदय एवं मोक्ष का कारण कहा तो पाँच पापों को **''दुःखमेव वा''** अर्थात् पाँच पाप दुःख स्वरूप ही हैं-कहकर संक्षिप्ततः विश्व की सभी समस्याओं को गर्भित कर लिया तथा संपूर्ण निदान भी दे दिया।

उपर्युक्त दृष्टि से जैन सिद्धांत विश्व के सर्वश्रेष्ठ, सामाजिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक, वैज्ञानिक, स्वास्थ्यकर, महान् क्रांतिकारी सर्वोदयी सिद्धांत हैं, इन्हें किसी भी काल, राष्ट्र, जाति, पंथ, परंपराओं की सीमा में आबद्ध नहीं किया जा सकता है। इसलिए ये सिद्धांत पहले जैसे प्रासांगिक, आधुनिक, समसामायिक थे, उसी प्रकार अभी भी हैं और आगे भी रहेंगे, क्योंकि परम सत्य सदा-सर्वदा अबाधित, अपरिवर्तनशील, नित्य-नूतन, चिर-पुरातन होता है। इसीलिये हे विश्व मानवों! यदि शांति एवं स्वास्थ्य चाहिए तो समस्त सामाजिक, जातिगत, क्षेत्रगत, राष्ट्रगत संकीर्णताओं को छोड़कर इन सिद्धांतों को अपनाकर स्व-पर-विश्व को सुख-शांति एवं समृद्धिमय बनाओ।

गति आदि 14 मार्गणा स्थानों में 14 गुणस्थानों के आत्मतत्त्व का विचार करना धर्म है। मोक्ष की प्राप्ति का उपाय भगवान् अरहंतदेव ने ही बतलाया है। इस प्रकार चिंतवन करना धर्मस्वाख्यातत्त्वानुप्रेक्षा है।

इसका फल-

एवमस्य चिंतयतो धर्मानुरागः सदा प्रतिपन्नो भवति।

इस प्रकार इस अनुप्रेक्षा के चिंतवन करने से धर्मानुराग सदा बढ़ता रहता है।

दशलक्ष्मयुतः सोऽयं जिनैर्धर्मः प्रकीर्तितः।

यस्यांशमपि संसेव्य विन्दन्ति यमिन शिवम्।। (150)

वह धर्म जिसके अंशमात्र को भी सेवन करके संयमी मुनि मुक्ति को प्राप्त होते हैं, उसे जिनेन्द्र भगवान् ने दशलक्षण युक्त कहा है।

न सम्यग्गदितुं शक्यं यत्स्वरूपं कुदृष्टिभिः।

हिंसाक्षपोषकैः शास्त्रैरतस्तैस्तन्निगद्यते।। (151)

धर्म का स्वरूप मिथ्यादृष्टियों तथा हिंसा और इन्द्रिय-विषय पोषण करने वाले शास्त्रों के द्वारा भले प्रकार नहीं कहा जा सकता। इस कारण इस धर्म का वास्तविक स्वरूप हम कहते है।

चिन्तामणिर्निधिर्दिव्यः स्वर्धेनुः कल्पपादपाः।

धर्मस्यैते श्रिया सार्धं मन्ये भृत्याश्चिरन्तनाः।। (152)

आचार्य महाराज कहते हैं कि लक्ष्मी सहित चिन्तामणि, दिव्य नवनिधि, कामधेनु और कल्पवृक्ष ये सब धर्म के चिरकाल किंकर (सेवक) हैं, ऐसा मैं मानता हूँ।

धर्मो नरोरगाधीशनाकनायकवाञ्छिताम्।

अपि लोकत्रयीपूज्यां श्रियं दत्ते शरीरिणाम्।। (153)

धर्म जीवों को चक्रवर्ती धरणेन्द्र तथा देवेन्द्र द्वारा वांछित और त्रैलोक्यपूज्य तीर्थंकर की लक्ष्मी को देता है।

धर्मो व्यसन संपाते पाति विश्व चराचरम्।

सुखामृतपयः पुरैः प्रीणयत्यखिलं जगत्।। (154)

धर्म कष्ट के आने पर समस्त जगत् के त्रस, स्थावर जीवों की रक्षा करता है और सुखरूपी अमृत के प्रवाहों से समस्त जगत् को तृप्त करता है।

पर्जन्यपवयार्केन्दुधराम्बुधिपुरन्दराः।

अमी विश्वोपकारेषु वर्तन्ते धर्मरक्षिताः।। (155)

मेघ, पवन, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, समुद्र और इन्द्र ये संपूर्ण पदार्थ जगत् के उपकार रूप प्रवर्तते है और वे सब ही धर्म द्वारा रक्षा किये हुए प्रवर्तते है। धर्म के बिना ये कोई भी उपकारी नहीं होते हैं।

मन्येऽसौ लोकपालानां व्याजेनाव्याहतक्रमः।

जीवलोकोपकारार्थं धर्म एव विजृम्भितः।। (156)

आचार्य महाराज ऐसा मानते है कि इन्द्रादिक, लोकपाल अथवा राजादिकों के ब्याज से (बहाने से) लोकों के उपकारार्थ यह धर्म ही अव्याहत फैल रहा है।

न तत्त्रिजगतीमध्ये भुक्तिमुक्त्योर्निबन्धनम्।

प्राप्यते धर्मसामर्थ्यान्न यद्यमितमानसै।। (157)

इस तीन जगत् में भोग और मोक्ष का ऐसा कोई भी कारण नहीं है, जिसको धर्मात्मा पुरुष धर्म की सामर्थ्य से न पाते हो अर्थात् धर्म सामर्थ्य से समस्त मनोवांछित पद को प्राप्त होते हैं।

नमन्ति पादाराजीवराजिकां नतमौलयः।
धर्तैकशरणीभूतचेतसां त्रिदशेश्वराः।। (158)

जिनके चित्त में धर्म ही एक शरणभूत है उनके चरण कमलों की पंक्ति को इन्द्रगण भी नम्रीभूत मस्तक से नमस्कार करते हैं।

धत्ते नरकपाताले निमज्जज्जगतां त्रयम्।
योजयत्यपि धर्मोऽयं सौख्यमत्यक्षमंगिनाम्।। (159)

यह धर्म नरकों के नीचे जो निगोद स्थान है उसमें पड़ते हुए जगतत्रय को धारण करता है, अवलंबन देकर बचाता है तथा जीवों को अतिन्द्रियसुख को भी प्रदान करता है।

नरकान्धमहाकूपे पततां प्राणिनां स्वयम्।
धर्म एवं स्वसामर्थ्यादत्ते हस्तावलम्बनम्।। (160)

नरकरूपी महाअंधकूप में स्वयं गिरते हुए जीवों को धर्म ही अपने सामर्थ्य से हस्तावलंबन (हाथ का सहारा) देकर बचाता है।

महातिशय सम्पूर्ण कल्याणोद्दाममन्दिरम्।
धर्मो ददाति निर्विघ्नं श्रीमत्सर्वज्ञवैभवम्।। (161)

धर्म महाअतिशय से पूर्ण, कल्याणों के उत्कटः निवास स्थान और निर्विघ्न ऐसे लक्ष्मी सहित सर्वज्ञ भगवान् के वैभव को देता है अर्थात् तीर्थंकर पदवी को प्राप्त कराता है।

याति सार्थं तथा पाति करोतिं नियन्ते हितम्।
जन्मपङ्कात्समुद्रधृत्य स्थापयत्यमले पथि।। (162)

धर्म, परलोक में प्राणी के साथ जाता है, उसकी रक्षा करता है, नियम से उसका हित करता है तथा संसाररूपी कर्दम से उसे निकालकर निर्मल मोक्षमार्ग में स्थापना करता है।

न धर्मसदृशः कश्चित्सर्वाभ्युदय साधकः।
आनन्दकुंजकन्दश्च हितः पूज्यः शिवप्रदः।। (163)

इस जगत् में धर्म के समान अन्य कोई समस्त प्रकार के अभ्युदय का साधक

नहीं है। यह मनोवांछित संपदा का देने वाला है। आनंदरूपी वृक्ष का कंद है अर्थात् आनंद के अंकुर इससे ही उत्पन्न होते है तथा हितरूप, पूजनीय और मोक्ष का देने वाला भी यही है।

व्यालानलगरव्याघ्रद्विपशार्दूल राक्षसाः।
नृपादयोऽपि द्रुह्यन्ति न धर्माधिष्ठितात्मनाम्।। (164)

जो धर्म से अधिष्ठित (सहित) आत्मा है, उसके साथ सर्प, अग्नि, विष, व्याघ्र, हस्ती, सिंह, राक्षस तथा राजादिक भी द्रोह नहीं करते हैं अर्थात् यह धर्म इन सबसे रक्षा करता है अथवा धर्मात्माओं के ये सब रक्षक होते हैं।

धर्म धर्म प्रजल्पन्ति तत्वशून्या कुदृष्टयः।
वस्तुतत्वं न बुध्यन्ते तत्परीक्षा क्षमा यतः।। (166)

तत्त्व के यथार्थ ज्ञान से शून्य मिथ्यादृष्टि धर्म-धर्म ऐसा तो कहते हैं परन्तु वस्तु के यथार्थ स्वरूप को नहीं जानते क्योंकि वे उसकी परीक्षा करने में असमर्थ हैं।

तितिक्षा मार्दवं शौचमार्दवं सत्यसंयमौ।
ब्रह्मचर्य तपस्त्यागाकिञ्चन्यं धर्मउच्यते।। (167)

(1) क्षमा (2) मार्दव (3) शौच (4) आर्जव (5) सत्य (6) संयम (7) ब्रह्मचर्य (8) तप (9) त्याग और (10) आकिंचन्य ये दस प्रकार के धर्म हैं। इनका विशेष स्वरूप तत्त्वार्थ सूत्रों की टिकाओं से जानना चाहिए।

यधत्स्वस्यानिष्टं तत्तद्वाक्चित्तकर्म्मभिः कार्यम्।
स्वप्नेऽपिना परेषामिति धर्मस्याग्रिमं लिंगम्।। (168)

धर्म का मुख्य (प्रधान) चिह्न यह है कि जो-जो क्रियाएँ अपने को अनिष्ट (बुरी) लगती है सो-सो अन्य के लिए मन, वचन, काय, से स्वप्न में भी नहीं करनी चाहिए।

धर्मः शर्म भुजंगपुंकवपुरीसारं विधातुं क्षमो।
धर्मः प्रापितमर्त्यलोक विपुल प्रीतिस्तदाशंसिनाम्।।
धर्मः स्वर्गनगरीनिरन्तर सुखास्वादोदयस्यास्पदम्।
धर्मः किं न करोति मुक्तिललनासंभोगयोग्यं जनम्।। (169)

यह धर्म धर्मात्मा पुरुषों को धरणेन्द्र की पुरी के सारमुख को करने में समर्थ है तथा यह धर्म उस धर्म के वांच्छक और उसके पालने वाले पुरुषों को मनुष्य लोक में विपुल प्रीति (सुख) प्राप्त कराता है और यह धर्म स्वर्ग पुरी के निरंतर सुखास्वाद के

उदय का स्थान है तथा यह धर्म ही मनुष्य को मुक्ति स्त्री से संभोग करने योग्य करता है। धर्म और क्या-क्या नहीं कर सकता?

नरकनिपातस्त्यक्तुमत्यन्तमिष्ट स्त्रिदशपतिमहर्द्धि प्राप्तुमेकान्ततो वा।
यदि चरमपुमर्थः प्रार्थनीयस्तदानीं, किमपरमभिधेयं नाम धर्मं विधत्त।। (178)

हे आत्मन्! यदि तुझे नरकपिता को छोड़ना परम इष्ट है अथवा इन्द्र का महान् वैभव पाना एकांत ही इष्ट है, यदि चारों पुरुषार्थों में से अंत का पुरुषार्थ (मोक्ष) प्रार्थनीय ही है, तो और विशेष क्या कहा जावे, तू एक मात्र धर्म का सेवन कर क्योंकि धर्म से ही कर्म नष्ट होकर समस्त प्रकार के इष्ट की प्राप्ति होती है।

सव्व जगस्स हिदकरो धम्मो तित्थंकरेहि अक्खादो।
धण्णा तं पडिवण्णा विसुद्धमणसा जगेमणुया।। (752) मूलाचार ॥

तीर्थंकरों द्वारा कथित धर्म सर्व जगत् का हित करने वाला है। विशुद्ध मन से उसका आश्रय लेने वाले जगत् में धन्य हैं।

जेणेह पाविदव्वं कल्लाणपरंपरं परमसोक्खं।
सो जिणदेसिदधम्मं भावेणुवणज्जदे पुरिसो।। (753)

जिसे इस जगत् में कल्याणों की परंपरा और परम सौख्य प्राप्त करना है वह पुरुष भाव से जिनेन्द्र देव द्वारा कथित धर्म को स्वीकार करता है।

खंतीमद्दवअज्जवलाघवतव संजमो आकिंचणदा।
तह होई बंभचेरं सच्चं चाओ य दसधम्मा।। (754)

क्षमा, मार्दव, आर्जव, लाघव, तप, संयम आकिंचन्य तथा ब्रह्मचर्य, सत्य और त्याग से दस धर्म है।

धर्म भावना का फल

उवसम दयाय खंती वड्ढइ वेरग्गदा य जहजह से।
तह तह य मोक्खसोक्खं अक्खीणं भावियं होइ।। (755)

जैसे-जैसे इस जीव के उपशम, दया, क्षमा और वैराग्य बढ़ते है वैसे-वैसे ही अक्षय मोक्षसुख भावित होता है।

संसारविसमदुग्गे भवगहणे कह वि मे भमंतेण।
दिट्ठो जिणवर दिट्ठो जेट्ठोधम्मोत्ति चिंतेज्जो।। (756)

संसारमय विषय दुर्ग इस भव वन में भ्रमण करते हुए मैंने बड़ी मुश्किल से जिनवर कथित प्रधान धर्म प्राप्त किया है-इस प्रकार से चिन्तवन करें।

सर्वेच्छा पूरक सर्वार्थ साधक अनंत सुख के दाता।
तीन लोक का सार चिंतामणी आतम धरम सच्चा।। ''कनकनन्दी कृत''

(1) वैदिक धर्म एवं विश्व शांति

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वो संजनाना उपासते।। 6/64/1 अथर्ववेद

तुम सब लोग एक मन हो जाओ, सब लोग एक ही विचार के बन जाओ, क्योंकि प्राचीन काल में एक मन होने के कारण ही देवताओं ने बलि पाई है।

सह नाववतु, सह नौ भुनुक्तु, सह वीर्य करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु, मा विद्विषावहै।। अरण्यक तै.आ. 8/2

हम दोनों (गुरु, शिष्य) का साथ-साथ रक्षण हो, हम दोनों साथ-साथ भोजन करें, हम दोनों साथ-साथ समाज के उत्थान के लिए पुरुषार्थ करें, हमारा अध्ययन तेजस्वी हो, परस्पर द्वेष न करें।

प्राणा यथात्मनोऽभीष्टाः भूतानामपि ते तथा।
आत्मोपम्येन मन्तव्यं बुद्धिमद्भिहात्माभिः।।

महाभारत (अनुशासन पर्व 275/19)

जैसे मानव को अपने प्राण प्यारे हैं, उसी प्रकार सभी प्राणियों को अपने-अपने प्राण प्यारे हैं। इसलिए जो लोग बुद्धिमान और पुण्यशाली है, उन्हें चाहिए कि वे सभी प्राणियों को अपने समान समझें।

(2) बौद्ध धर्म एवं विश्व शांति

अहिंसका ये मनुयो निच्चं कायेन संवुता।
ये यन्ति अच्चुतं ठानं यत्थ गन्त्वा न सोचरे।। (5)

जो मनुष्य हिंसा से रहित, नित्य अपने शरीर में संयत है, वे उस अच्युत पद को प्राप्त करते है जिसे प्राप्त कर वे शोक नहीं करते हैं।

अक्कोच्छि मं अवधि मं अजिन मं अहासि मं।
ये ते उपनय्हन्ति वेरं तेसं न सम्मति।। (3) यगक वग्गो

उसने मुझे डाँटा, उसने मुझे मारा, उसने मुझे जीत लिया, उसने मेरा लूट लिया-जो ऐसा मन में बनाये रखते हैं, उनका वैर शांत ही नहीं होता है।

न हि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचनं।
अवेरेन च सम्मन्ति एस धम्मो सनन्तनो।। (5)

इस संसार से वैर कभी शांत नहीं होते, अवैर (मैत्री) से ही शांत होते हैं-यह सदा का नियम है।

यथा अहं तथा एते यथा एते तथा अहम्।

अत्तानं उपमं कत्वा न हनेय्य न घातये।। सुत्त निपात 3-3-27 बुद्ध धर्म

जैसे मैं हूँ वैसे ये हैं तथा जैसे ये है वैसा मैं हूँ-इस प्रकार आत्म सदृश्य मानकर न किसी का घात करें, न करावें।

सव्वे तसन्ति दण्डस्य, सव्वेसिं जीवितं पियं।

अत्तानं उपमं कत्वा न हनेय्य न घातये।। 10/1

सब लोग दण्ड से डरते हैं, मृत्यु से भय खाते हैं। दूसरों को अपनी तरह जानकर न तो किसी को मारे और न किसी को मारने की प्रेरणा करें।

(3) यहूदी धर्म एवं विश्व शांति

अन्याय न करो। शोषण न करो। ब्याज न लो मुनाफा न लो। किसी को सताओ मत। जमीन की सेवा करो। गुलामों को मुक्त करो। सदाचार का पालन करो। श्रम करो। लालच मत करो। यही तो है यहोवा का आदेश।

प्रेम, करुणा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, श्रमनिष्ठा, भूमि की सेवा, अनाथों, पीड़ित और विधवाओं की सेवा, सदाचार और पवित्रता यही तो है यहोवा को प्रसन्न करने के उपाय।

(4) पारसी धर्म एवं विश्व शांति

मनुष्य के 10 कर्त्तव्य-

(1) किसी की निंदा मत करो (2) मन में लोभ-लालच का भाव मत रखो (3) किसी पर क्रोध मत करो (4) किसी प्रकार की चिंता न रखो (5) भोग-विलास में मत डूबो (6) दूसरों से अनुचित डाह मत करो (7) आलसीपन की आदत मत डालो (8) उद्यमी बनो (9) दूसरों की संपत्ति न ऐंठो, न हड़पों (10) पराई स्त्रियों से दूर रहो।

(5) ईसाई धर्म एवं विश्व शांति

ईसा मसीह ने भी उपदेश दिया था-अपने पड़ोसी से वैसा ही प्यार करो जैसा स्वयं से करते हो। मानव की सेवा ही परमात्मा की सेवा है। अंतिम न्याय के दिन की कथा का दृष्टांत बहुत ही बेबाक है, उन सभी लोगों को स्वर्ग भेज दिया गया जिन्होंने अपने साथी प्राणियों की सहायता की थी यद्यपि वह ईसा को जानते तक नहीं थे।

(6) ताओ धर्म एवं विश्व शांति

प्रकृति का सहज नियम है-प्रेम। सारे दुःखों का मूल है-प्रेम का अभाव। ताओ धर्म में प्रेम के सहज मार्ग को अपनाने की बात कही गयी है। नम्रता और प्रेम को ज्ञान और आनंद का मार्ग बताया गया है। जो अपने साथ प्रेम करे, उसी से तो प्रेम करना चाहिए, पर यहाँ तो उस से भी प्रेम करना है, जो अपने से प्रेम नहीं करता। अच्छे के साथ ही नहीं, बुरे के साथ भी अच्छा बर्ताव करना है। तभी तो बुरा भी अच्छा बन सकेगा।

(7) कांगफ्यूश धर्म एवं विश्व शांति

(1) प्रेम-सभी गुणों का मूल है। **(2) न्याय**-सभी को उचित न्याय मिलना आवश्यक है। सब अपने कर्त्तव्यों का ठीक से पालन करें, तभी अपने अधिकारों का उपयोग कर सकेंगे। **(3) नम्रता**-कर्त्तव्य और अधिकार तभी मिल सकेंगे, जब हृदय में नम्रता होगी। **(4) विवेक**-भला क्या है, बुरा क्या है-इस बात का सदा विवेक करना आवश्यक है। जो अच्छा हो, उसे ग्रहण करो जो बुरा हो, उसे छोड़ दो। **(5) ईमानदारी**-सच्चाई और ईमानदारी सभी सद्‌गुणों की आधारशिला है। वह व्यक्तिगत जीवन में भी जरूरी है, सामाजिक जीवन में भी।

(8) इस्लाम धर्म एवं विश्व शांति

इस्लाम धर्म के पैगम्बर हजरत मुहम्मद मानवीय जीवन को इतना अधिक सम्मान करते थे कि उनमें अपने पराये का अंतर भी न था। एक बार एक यहूदी की अर्थी उनके सामने से जा रही थी, तो वह उनके सम्मान में खड़े हो गये। उनके एक साथी ने कहा यह तो मुसलमान नहीं था। उन्होंने फर्माया क्या वह मनुष्य न था, अर्थात् मानव का आदर आवश्यक है। वह मुसलमान हो या न हो।

दीर्घकालिक पीड़ा से उत्पन्न व्यंगपरक सुधारात्मक कविता

इस देश की धरती चोर उगले!

पृथ्वी के 200 देशों में भारत का स्तर 172 व रैंक में 100वाँ स्थान व खुशहाल में 117वें स्थान से पीड़ित होकर यह कविता बनी।

(चाल : मेरे देश की धरती सोना उगले.....)

इस देश की धरती...चोर उगले...उगले भ्रष्टाचारी...इस देश की धरतीऽऽऽ...(स्थायी)...
यहाँ जन्म लेते हैं आलसी-ठग-कामचोर-नकलची...

इनके निर्माता स्कूल-महाविद्यालय-विश्वविद्यालय होते...
इनका प्रयोग होता सर्वत्र...व्यक्ति-समाज-राष्ट्र तक...
जिस देश में जन्मे थे तीर्थंकर...बुद्ध-राम-ज्ञानी यह वह देश...इस देश...(1)...

नीति-नियम-सदाचार-कानून...हो गये सब कुछ 'आउट ऑफ डेट'...
फैशन-व्यसन-उद्दण्ड-उत्शृंखल...हो गये सब 'अप टू डेट'...
संस्कार-संस्कृति-आध्यात्मिकता...सब हो गयी विदेश निर्यात...
अश्लील कामुकता रेडीमेड फूड...हो रहे है विदेशों से आयात...इस देश...(2)...

'योग' जब 'योगा' बनता है...'देशी उबटन' (जब) 'हर्बल चीज'...
उसका नकल होता देश में...'राम' जब बन जाते 'रामा' है...
जिस देश को खाना बनाना न आता...विदेश का बासी खाते है...
रोगकारक हिंसक मिलावट खाकर...'अप टू डेट' जो बनते है...इस देश...(3)...

फैशन के लिए न्यू जीन्स (कपड़ा) को भी...फाड़कर चिथड़ा लगाते है...
बोल्ड स्मार्ट ब्यूटीफूल बनने...अश्लील काम जो करते है...
हीरो-हीरोईन-खिलाड़ी-नेता...जहाँ के भगवान्/(नायक) होते है...
माता-पिता-गुरु-वृद्ध रोगी को...तिरस्कार दृष्टि से देखते है...इस देश...(4)...

धन ही जहाँ धर्म हो गया...मान-सम्मान व वर्चस्व...
धर्म सदाचार सेवा सहयोग...जहाँ से हो गये बहिष्कृत...
अंधी दौड़ में जहाँ के लोग...दौड़ते हैं विकास के लिए...
स्वास्थ्य-सुख-शांति गँवाकर के...भागते आधुनिकता के लिए...इस देश...(5)...

आध्यात्मिक-सदाचार हीन...हो रहे हैं धार्मिकजन...
ख्याति-पूजा-लाभ-प्रसिद्धि हेतु...करते धार्मिक आयोजन...
प्रकृति संरक्षण-स्वच्छता की...जहाँ होती कागजी कार्यवाही...
जहाँ प्रदूषण से पूजित होती...जीवनदायिनी गंगा नदी...इस देश...(6)...

जिस देश की महिलाएँ होती थी...सती-साध्वी-विदुषी...
उस देश की नारी (की) दशा को...लिखने की नहीं है रूचि...
न्याय-राजनीति-प्रशासन की...सर्वत्र व्यवस्था प्रसिद्ध...
'बंदर बाँट सम' चलती है...न सत्य-न्याय से संबंध...इस देश...(7)...

अभी भी देश में होते हैं...संत-सज्जन व ज्ञानी...

भले उनकी संख्या हो...सर्वत्र अत्यंत भी कमी...
तथापि उनको न देते है...सम्मान-सेवा-सहयोग...
उनसे लाभान्वित न होते...इण्डिया के (ऐसे) इडियट लोग...इस देश...(8)...
'विश्व गुरु' भारत देश आज...बना तुच्छ-पिछड़ा देश...
जिसका यश स्वर्ग-देव थे गाते...पृथ्वी में आज निन्दित...
महावीर-बुद्ध-राम के वंशज...जगाओ तुम अपना तेज...
दुर्गुण तम नाश के हेतु...'कनक' बनाया व्यंग काव्य...इस देश...(9)...

आसपुर, दिनांक 24.06.2015, रात्रि 11.20

दुनिया का सबसे खुशहाल देश स्विट्जरलैंड

वैश्विक सूची में भारत 117वें स्थान पर

संयुक्त राष्ट्र। खुश देशों के वैश्विक सूचकांक में भारत का प्रदर्शन अच्छा नहीं है और वह 158 देशों की इस सूची में 117वें स्थान पर आया है। इस सूचकांक में प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद, जीवन प्रत्याशा, अपनी पसंद की जिंदगी जीने के लिए सामाजिक सहारा और आजादी को खुशी का संकेतकों के रूप में इस्तेमाल किया गया है।

दुनिया में स्विट्जरलैंड को सबसे खुश देश बताया गया है जो टिकाऊ विकास हल नेटवर्क (एसडीएसएन) द्वारा प्रकाशित 2015 की विश्व खुशी रिपोर्ट से पहले नंबर पर आया है। एसडीएसएन संयुक्त राष्ट्र की वैश्विक पहल है। शीर्ष पाँच स्थानों पर अन्य देश आईसलैंड, डेनमार्क, नार्वे और कनाडा है।

भारत 117वें स्थान पर है और वह पाकिस्तान (81), फिलस्तीन (108), बांग्लादेश (109), यूक्रेन (111) और इराक (112) जैसे देशों से भी नीचे है। वह 2013 की रिपोर्ट से छह स्थान नीचे आ गया है। उस साल वह 111 स्थान पर था।

रिपोर्ट में कहा गया है, उत्तरोत्तर, खुशी को सामाजिक प्रगति एवं सार्वजनिक नीति के लक्ष्य के उचित मापदंड समझा जाता है। रिपोर्ट कहती है कि खुशी सूचकांक इसकी व्याख्या करता है कि कैसे सुख के मापन का देशों की प्रगति का आकलन करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

वर्ष 2015 की विश्व खुशी रिपोर्ट में प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद, व्यक्ति को मुश्किल के वक्त भरोसा करने के लिए सामाजिक सहारा, अपनी पसंद की जिंदगी जीने की आजादी, स्वस्थ जीवन प्रत्याशा, उदारता और भ्रष्टाचार की धारणा जैसे कारकों का इस्तेमाल किया गया है। इस सूची में अमेरिका 16वें, ब्रिटेन 21वें, सिंगापुर 24वें, सउदी अरब 35वें, जापान 46वें और चीन 84वें स्थान पर हैं।

अफगानिस्तान और युद्ध प्रभावित सीरिया अफ्रीका उप सहारा देशों-टोगो, बुरूंडी, बेनिन, रवांडा, बुरकिना फासो, आइवरी कोट, गिनिया और चाड इन 158 देशों में सबसे कम खुश देश हैं। रिपोर्ट कहती है कि वर्ष 2015 मानवता के लिए एक अहम पड़ाव है क्योंकि वैश्विक विकास के और अधिक समग्र एवं टिकाऊ पैटर्न के सिलसिले में दुनिया को सहयोग पहुँचाने के लिए सितम्बर में टिकाऊ विकास लक्ष्य (एसडीजी) को संयुक्त राष्ट्र सदस्य देशों द्वारा अपनाया जाना है।

मिलावट की आत्मकथा

(मिलावट रूपी महापाप से भयंकर अनिष्ट)

(चाल : तुम दिल की धड़कन....., छोटी-छोटी गैया.....)

मैं हूँ मिलावट सबसे न्यारा, सबसे घातक काम मेरा।
महापाप का मैं हूँ बाप...तो भी लोभी चाहे मुझे जी-जान।।ध्रु.।।
लोभी से होता है मेरा जन्म, रक्त बीज सम मेरा (होता) विस्तार।
भस्मासुर सम मैं भस्म करता हूँ, जन्मदाता व जो मुझे करे स्वीकार।।
इंडियन अधिक है मेरे भक्त, शिक्षित शहरी मुझसे (अधिक) आसक्त।
लोभी व्यापारी व दलाल-कंपनी, सबसे अधिक मेरे प्रिय भक्त।।
हीरो-हीरोईन मेरे होते प्रचारक, मेरे गुणों का वे करते है बखान।
इंडियन हेाते है इनके अंधभक्त, जिससे मेरे भी वे बनते भक्त।।
औषधि-भोजन-मसाला-दूध, मावा-मिष्ठान्न-रेडीमेड फूड।
कोका-कोला, थम्स-अप-मैगी-चॉकलेट, चाय व सोना-चाँदी आदि तक।।
सर्वत्र फैला है मेरा विश्वरूप, मेरी मोहनी रूप से सभी आकर्षित।
मेरा प्रसाद भी वे सभी पाते जो, आलसी प्रमादी अज्ञानी होते।।
कुछ भोले-भाले ही मुझे झेलते, फैशनी-व्यसनी मुझे महत्व देते।
वे सब मेरा प्रसाद पाते, धन-जन आरोग्य प्राण गँवाते।।

विदेशों में मेरे भक्त है कम, वे न मानते मेरे महान् गुण।
इसलिये वे मेरा स्वागत न करते, स्वदेश आने हेतु प्रतिबंध लगाते।।
भारत से मेरा वहाँ गमन न होता, भारतीयों को ही मैं आशीष देता।
सरकार कानून से लेकर प्रजा तक, मेरे मोह से सभी होते मोहित।।
कुछ अनपढ़ ग्रामीण लोग जो, फैशन-व्यसनों को नहीं जानते।
स्वावलंबी व श्रमजीवी होते वे, मेरी भक्ति में न आसक्त होते।।
अन्य जन मानते उन्हें पिछड़ा, मैंने उनको भी नहीं है छेड़ा।
तन-मन से वे होते है स्वस्थ, धन-जन-आरोग्य से (होते) न वंचित।।
आधुनिकता व अज्ञान के कारण, भारत में मेरा होता पूजन।
भारतीय जब होंगे महान्, मेरा न करेंगे पूजा व गुणगान।।
भो भारतीय! स्व-संस्कृति को जानो, उसकी गरिमा को पहिचानो।
जिससे बनोगे तुम भी महान्, अतः 'कनक' ने लिखे मेरे अवगुण।।

आसपुर, दिनांक 14.06.2015, अपराह्न 6.22

श्रमण गुरुवरश्री कनकनन्दी जी की सत्यवाणी

सृजयित्री-श्रमणी आर्यिका सुवत्सलमती

(चाल : छोड़ों कल की बातें.....)

छोड़ों अज्ञान की बातें...अज्ञान की बात अनादि...
श्रमण गुरुवर कनक की...सुनो सत्यवाणी...
हे! वैश्विकवासी...हे! जगत्वासी...(ध्रुव)...

अपने पुरातन भ्रमों को...हम तोड़ चुके हैं...
क्यों देखे वह भूतकाल...जो छोड़ चुके हैं...
चाँद मंगल तक जा पहुँचा है...आज जमाना...
हमें तो मोक्ष महल तक...है पहुँचना...
नया शोध है, नया बोध है...बनना है आतमज्ञानी...हे! वैश्विक...(1)...

कनक सूरी मन से परे...सत्य ही सोचे...
वाद-विवाद-संक्लेश...सब छोड़ चुके है...
विभाव भावों से भी इनका...नहीं है नाता...
आत्म स्वभाव में ही सतत...रमण करे है...

सरल स्वभावी वैज्ञानिक है...ये गुरु उदारभावी...गुरु आतमज्ञानी...(2)...

आओ हम सब आत्म तत्त्व...'मैं' को ही जाने...
अपने द्वारा अपने में ही...'मैं' को पाये...
आदिनाथ से वीर प्रभु की...इस भूमि पर...
अपनी अनंत आत्मशक्ति...को जगाये...
नवाचार है नव दृष्टि है...बनेंगे आतमज्ञानी...हे! वैश्विकवासी...(3)...

कतिसौर, दिनांक 03.07.2015, मध्याह्न

आचार्यश्री कनकनन्दी जी के प्रबुद्ध/श्रेष्ठ शिष्य-वर्ग

श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा सृजित ''बगिया की फुलवारी''

(तर्ज : दुनिया बनाने वाले, क्या तेरे मन में समाई.....)

अनुभवदानी/अनुभवधारी गुरुवर, होऽऽऽ 2
क्या तुमने रचना रचाई...
विज्ञानी की बगिया सजाई...
तूने ज्ञान की ज्योति जलाई/तूने ज्ञान की ज्योत जगाई।।टेक।।
सोहनराज जैसे ज्ञानी है शिष्य
पारसमलजी तेरे आध्यात्मिक शिष्य
प्रभात जैसे विज्ञानी शिष्य-2
सुशील जी जैसे सरल शिष्य
धीरे से मुस्काते, देखो...2 कच्छारा विज्ञानी भाई
विज्ञानी की बगिया सजाई...
तूने...ज्ञान की भक्ति जगाई
तूने ज्ञान की ज्योत जलाई...।।अनुभवदानी।।...(1)
श्यामलाल जी गोदावत नम्र विज्ञानी
निर्मला देवी भी है, सरल सुज्ञानी
अनुवाद का काम कराये प्रद्युम्न भाई...2
जिनोम पे काम कराये शैलेन्द्र भाई

वैयावृत्ति में ही देखो...2 खेतानी ने संपत्ति लगाई
ज्ञान की भक्ति जगाई/तूने ज्ञान...अनुभवधारी गुरुवर...(2)
आहारदानी आशा खुशपाल भाई
मणिभद्र दीपेश मयंक सेवाभावी
संजय मुकेश निःस्वार्थ सेवी...2
दर्शना अजय व सोहन भाई
खेतानी परिवार करे, हाँ...2 साधु चिकित्सा सारी
विज्ञानी की बगिया सजाई
तूने ज्ञान की ज्योत जलाई
तूने विज्ञानी...अनुभवधारी ऋषिवर होऽऽऽ 2
क्या तुमने रचना रचाई...
तूने...विज्ञानी की बगिया सजाई...(3)

एक गृहणी माँ पाँच नौकरानी से अधिक कामकाजी

एक माँ का वेतन रु. 92,000 प्रतिमाह से अधिक

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : होठों से छू लो तुम.....(माता तू दया करके), ओ रात के मुसाफिर..., मधुवन के मंदिरों में...)

माँ त्याग की है मूरत...उसका न मोल होता...
तप-त्याग व सेवा/(धर्म) का...मोल/(तोल) कभी न होता...(ध्रुव)...
भौतिक विनिमय तो...संकीर्ण-स्वार्थ होता...
स्वार्थ जहाँ भी होता...वह व्यापार ही होता...
तप-त्याग-सेवा धर्म...ये सभी है स्वार्थ परे...
निःस्वार्थ व परमार्थ...होते भौतिक परे...(1)...
माता न नौकरानी...न होती भौतिक स्वार्थी...
तो भी माँ से कृतघ्नता...करते है भौतिक स्वार्थी...
भौतिक दृष्टि से भी...योगदान माँ का महान्...
अवकाश लिए बिना...जो काम करती हरदम...(2)...
शेफ[1] लॉण्ड्री[2] एडमिन[3] व...चाइल्ड[4] केयर काम...

करती है सदा माता...योग्य अकाउंटेंट[5] (का) काम...
ग्वालिनी व बागवानी...सर्वोपरि योग्य शिक्षिका...
एक होती योग्य माता...अनेक काम की नायिका...(3)...
पाँचों ही काम हेतु...भारत के हिसाब से वेतन...
बयानवे (92) हजार रुपये...मासिक योग्य वेतन...
अन्य-अन्य (शेष) कार्य हेतु...और भी अधिक वेतन...
पाने योग्य है भारत में...विदेशों में अधिक वेतन...(4)...
पूरे जीवन में तो अरबों...रुपयों के काम करती...
तो भी न होती कामकाजी...वेतन जो न लाती...
अभी क्या हुआ भारत को...सब धन से ही तौलते...
शिक्षा-संस्कृति-धर्म को भी...जो धन से ही तौलते...(5)...
अतः माता-पिता-गुरु...वृद्ध रोगी की भी सेवा...
न होती है उसी प्रकार...यथा होती धन की सेवा...
अतः विश्वगुरु भारत...बना है भ्रष्टों का देश...
धन हेतु करते शोषण...व मिलावट विशेष...(6)...
महान् बनने हेतु...करो तप-त्याग-दान...
अतएव 'कनकनन्दी'...करते तुम्हें आह्वान...(7)...
पाड़वा, दिनांक 09.07.2015, मध्याह्न 12.37

राजस्थान की 73% महिला आबादी की यही पहचान

करती हैं 5 प्रोफेशनल्स का काम फिर भी बेरोजगार

73%... ये है राजस्थान में महिलाओं की आबादी का वो हिस्सा जिसे सरकार और समाज बेरोजगार मानता है। अधिकारिक परिभाषा के मुताबिक जो कोई काम नहीं करतीं, जिनका अर्थव्यवस्था में कोई योगदान नहीं है। ये हैं राजस्थान की गृहणियाँ...। गृहणियाँ जो एक साथ 5 प्रोफेशनल्स के बराबर काम करती हैं। उनकी ड्यूटी साल के 365 दिन और दिन के 24 घंटे की होती है। न कोई छुट्टी, न कोई भत्ता...और इतने काम के बाद कोई तनख्वाह तक नहीं मिलती। हमने इन गृहणियों की तुलना उन प्रोफेशनल्स से की, जिन्हें अर्थव्यवस्था का सक्रिय भागीदार माना जाता है। पाया कि एक गृहणी **औसतन 92000 रुपये** मासिक वेतन की हकदार है। कैसे? ये गणित कुछ यूँ समझिए...

कितने किरदार जीती है हाउसवाइफ...और हर किरदार की सैलरी

शेफ : पूरे परिवार के लिए खाना–एक गृहणी पूरे परिवार के लिए औसतन दिन में तीन बार खाना पकाती है। इस मेन्यू में नाश्ते की चीजों से लेकर पकवान तक सब कुछ शामिल होता है। 28000 रुपये एक साधारण होटल में शेफ की औसत मासिक तनख्वाह। बड़े होटलों में सैलरी 1.5 से 5 लाख के बीच होती है।

लॉन्ड्री : कपड़े-बर्तन साफ करना–एक गृहणी पूरे परिवार के सारे कपड़े धोती है और बर्तन भी साफ करती है। प्रोफेशनली ये काम परंपरागत तौर पर धोबी करते रहे है, जबकि होटलों में लॉन्ड्री व क्लीनिंग के लिए अलग स्टाफ होता है। 8000 रुपये है एक साधारण होटल में लान्ड्री व क्लीनिंग स्टाफ की औसत तनख्वाह। निजी लॉन्ड्रीज में ये तनख्वाह और ज्यादा है।

एडमिन : परिवार की जरूरतें पूरी करना–एक गृहणी परिवार के लिए राशन, दवाइयाँ व अन्य सामान की खरीदारी करती हैं। साथ ही घर का कौनसा काम कितना जरूरी है एक प्रशासक की तरह इसका क्रम तय करती है। 20000 रुपये है मिड लेवल कंपनी में एडमिन स्टाफ की औसत मासिक सैलरी। कंपनी बड़ी हो तो तनख्वाह भी बढ़ जाती है।

चाइल्ड केयर : बच्चों की देखभाल–एक गृहणी बच्चों की पूरी देखभाल करती है। उनके खाने-पीने और सेहत की देखभाल के साथ-साथ स्कूल के शुरुआती सालों में पढ़ाई में भी वही हाथ बँटाती है। 8000 रुपये है एक आया को मिलने वाला औसत मासिक वेतन। आया बच्चों से जुड़े सारे काम भी नहीं करती।

एकाउंटेंट : घर का बजट बनाना–एक गृहणी अपने पति के वेतन के मुताबिक घर का बजट तय करती है और कम से कम खर्च में घर की सारी जरूरतें पूरी करने की कोशिश करती हैं। 28000 रुपये है किसी मिड लेवल कंपनी में एकाउंटेंट को मिलने वाला औसत मासिक वेतन।

92000 रुपये होनी चाहिए एक गृहणी की औसत तनख्वाह, यदि हम उसके सारे कामों के लिए प्रोफेशनल्स की सैलरी जोड़ें तो।

21408261 ये है राजस्थान की आबादी में बेरोजगार कहलाने वाली महिलाओं की कुल संख्या।

30% 20-39 वर्ष आयुवर्ग की महिलाओं की आबादी की 30% ऐसी है जो अपना परिवार खुद पाल रही है।

1100000 महिलाएँ राज्य में नौकरी माँग रही हैं, मगर सामाजिक या व्यावसायिक कारणों से नहीं मिल पा रही है।

आचार्य कनकनन्दी जी ससंघ के आदर्श

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव की स्व-प्रवृत्ति/संघ पद्धति

रचयित्री-श्रमणी आर्यिका सुवत्सलमती

(चाल : ओ रात के मुसाफिर....., परवर दिगारे आलम....., मधुवन के मंदिरों में....., मुझे इश्क है तुझी से.....)

कनकनन्दी गुरुवर...जग से हैं ये निराले...
उनके अनुभवों से...लाभान्वित है सारे...(ध्रुवपद)...
संक्लेश-मनमुटाव को...संघ में न है स्थान...
ख्याति-प्रसिद्धि-याचना...लाभ का न है काम...
सहज-सरल वृत्ति...न विभावों में प्रवृत्ति...
शांत-गंभीर वृत्ति...गुरुदेव की प्रकृति...कनकनन्दी...(1)...
कोई आये तो है स्वागत...जाये तो है आशीष...
विपरीत में तटस्थ...समता का भाव नित्य...
अध्यात्म की है चर्चा...मैं को पाने की वार्ता...
किसी का न मैं हूँ कर्त्ता...स्व-कर्म का ही भर्ता...कनकनन्दी...(2)...
बड़े-छोटे का न भेद...मत-पंथ का न भेद...
क्षुद्र भावों का उच्छेद...वसुधैव कुटुम्बकम्...
वैज्ञानिक हैं संत...नित शोध-बोध करते...
विश्लेषण आत्मा का ही...दुःख-शोक-क्लेश हरते...कनकनन्दी...(3)...
चक्री से भी महान्...देवेन्द्र से भी पूज्य...
सुवत्सल भाव मुख्य/(सत्वेषु मैत्री भाव)...मुक्ति सुख ही लक्ष्य...
गुरुवर मेरी मुस्कान...गुरुदेव ही आधार...
स्वाभिमान आप ही हो...मन प्राण प्यारे गुरुवर...कनकनन्दी...(4)...

पाड़वा, दिनांक 06.07.2015, प्रातः 6.36

मैं आडम्बर क्यों नहीं करता?!

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., तुम दिल की धड़कन में.....)

कुछ भी न करना (है) मुझे बाह्य आडम्बर...

जिससे उत्पन्न होते है बहु बवण्डर...
समता-शांति का भी होता विनाश...
ध्यान-अध्ययन भी न होता विशेष...(1)...
धर्म तो आत्मा का निज शुद्ध-स्वभाव...जो है समतामय शांति स्वभाव...
आडम्बर है अशुद्ध अनात्म काम...जिससे होते उत्पन्न दुःख विभिन्न...
आडम्बर का अंतरंग कारण (होता) दंभ...दंभ प्रदर्शन हेतु (होता) बाह्य आडम्बर...
इसी हेतु धन-जन-साधन चाहिए...समय-शक्ति-बुद्धि व श्रम चाहिए...(2)...
मञ्च माईक पण्डाल व माला चाहिए...विज्ञापन होर्डिंग व पत्रिका चाहिए...
यान-वाहन-भोजन-सम्मान चाहिए...आत्मदर्शन बिन प्रदर्शन चाहिए...
मैं हूँ वीतरागी निर्ग्रंथ श्रमण...अंतरंग-बहिरंग परिग्रह शून्य...
आडम्बर हेतु दोनों परिग्रह चाहिए...अतः मुझे आडम्बर नहीं चाहिए...(3)...
आडम्बर हेतु याचना दबाव होता...धनी-गरीब में भेद-भाव भी होता...
अपेक्षा-उपेक्षा व प्रतीक्षा भी होती...अशांति-विषमता-विकथा भी होती...
संकल्प-विकल्प व संक्लेश होते...ध्यान-अध्ययन-चिन्तन न होते...
नवीन शोध-बोध-लेखन न होते...'कनकनन्दी' अतः आडम्बर से बचते...(4)...

पाड़वा, दिनांक 08.07.2015, मध्याह्न 2.55

ॐकार स्वरूप सद्गुरु/(समर्थ)

-आर्यिका सुवत्सलमती

(चाल : ओंकार स्वरूपा.....)

ॐकार स्वरूपी...सद्गुरु है ज्ञानी। अनाथों के नाथ...तुम्हें नमूँ...3...।।ध्रु.।।
तुम्हीं मेरी माता...तुम्हीं मेरे पिता। तुम्हीं मेरे बंधु...सखा तुम्हीं हो।
तुम्हीं मेरे विभु...तुम्हीं मेरे प्रभु। तुम्हीं मेरे सर्वस्व...तुम्हें नमूँ...3...(1)
मतिज्ञान तुझमें...श्रुतज्ञान तुझमें। शक्ति रूप में...सभी ज्ञान तुझमें।
भविष्य काल के...सर्वज्ञ तुम्हीं। हितोपदेशी...तुम्हें नमूँ...3...(2)
कलीकाल...समन्तभद्र तुम्हीं हो। जिनसेन वीरसेन...अकलंक तुम्हीं।
अमृतचन्द्र...अध्यात्म कवि। अनुभव भास्कर...तुम्हें नमूँ...3...(3)
न्याय नीति के...तुम्हीं हो ज्ञाता। आयुर्वेद व्याकरण...कला के ज्ञाता।
अनुभव ज्ञान से...देते हैं साता। भव्यों के त्राता...तुम्हें नमूँ...3...(4)

पाड़वा, दिनांक 08.07.2015, मध्याह्न 12.30